काया में समाया प्राणाग्नि का जखीरा

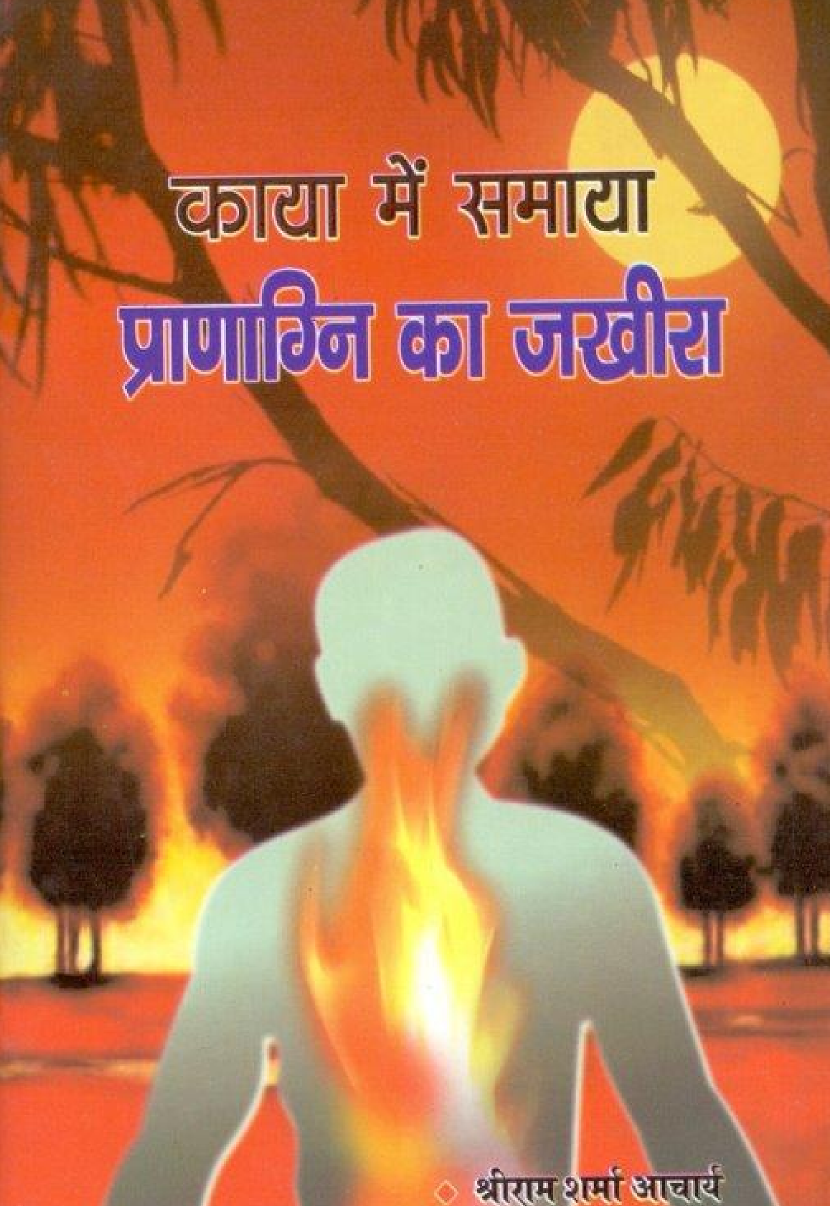

श्रीराम शर्मा आचार्य

काया में समाया, प्राणाग्नि का जखीरा

*

लेखक

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

*

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९

फैक्स नं०- २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् २०१० मूल्य : ७.०० रुपये

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा-२८१००३

*

लेखक

श्रीराम शर्मा आचार्य

*

मुद्रक :

युग निर्माण योजना प्रेस

गायत्री तपोभूमि, मथुरा (उ. प्र.)

अंतराल में निहित सिद्धि वैभव

बीज में प्राण तत्त्व होता है। वही नमी और आरंभिक पोषक अनुकूलता प्राप्त करके अंकुरित होने लगता है। इसके उपरांत वह बढ़ता, पौधा बनता और वृक्ष की शकल पकड़ता है या नहीं, यह इस बात पर निर्भर है कि उसे जड़ें जमाने का आवश्यक खाद, पानी व पोषण प्राप्त हुआ या नहीं। यदि उसकी आवश्यताएँ पूरी होती चलें तो बढ़वार रुकती नहीं, किंतु यदि बीज अपने स्थान पर बोरे में ही बंद रखा रहे, उसे सुखाया और कीड़ों से बचाया जाता रहे तो वह मुद्दतों तक यथा स्थिति अपनाए रहेगा। बहुत पुराना हो जाने पर काल के प्रभाव से वह हतवीर्य हो जाएगा अथवा घुन जैसे कीड़े लगकर उसे नष्ट कर देंगे।

बीज में उगने की शक्ति होती है यदि वह पका हुआ हो। यदि उसे कच्ची स्थिति में ही तोड़ लिया गया है तो वह खाने के काम भले ही आ सके; बोने और उगने की क्षमता विकसित न होगी। वह देखने में तो अन्य बीजों के समान ही होगा, पर परखने पर प्रतीत होगा कि उसमें वह गुण नहीं है, जो परिपक्व स्थिति वाले बीजों में पाया जाता है।

हर मनुष्य में प्राणशक्ति होती है, पर उसकी मात्रा में न्यूनाधिकता बनी रहती है। यह इस बात पर निर्भर रहता है कि प्राण रूपी बीज को प्रौढ़ बनाने के लिए जानकारी अथवा गैर परिपक्वता लाने वाले प्रयत्न होते रहे या नहीं।

मानवी प्राणशक्ति का विकास और परिपाक इस बात पर निर्भर है कि उसमें पूर्व संचित संस्कारों का समूह था या नहीं। गर्भ-धारण करते समय माता-पिता के रज-वीर्य मे अभीष्ट उत्कृष्टता या परिपक्वता थी या नहीं ? उसे आरंभिक पोषण मिला या नहीं ? प्राण प्रक्रिया के अनुदान समुचित मात्रा में मिले या नहीं ? यह सब भ्रूणावस्था में पूरी की जाने वाली आवश्यकताएँ हैं। इसके बाद जब परिपक्व बालक संसार के खुले वातावरण में साँस लेता है और समीपवर्ती लोगों द्वारा विनिर्मित वातावरण का प्रभाव ग्रहण करता है,

तब भी उस स्थिति में मनुष्य प्रभाव ग्रहण करता है। खान-पान से, जलवायु से स्थूल शरीर के स्तर का निर्माण होता है, किंतु प्राण प्रभाव समीपवर्ती लोगों की चेतना से ही उपलब्ध होता है। खोटे और ओछे लोगों के संपर्क से व्यक्ति, स्तर की दृष्टि से ऊँचा नहीं उठ सकता। मांसलता की दृष्टि से वह मोटा, पतला या सुंदर, कुरूप हो सकता है, पर व्यक्ति में जो प्रतिभा पाई जाती है, विशिष्ट स्तर की विशेषता देखी जाती है, वह इस बात पर निर्भर रहती है कि संपर्क-वातावरण में किस स्तर की जीवट एवं क्षमता विद्यमान थी। अन्न-जल से रक्त-मांस बनता है किंतु व्यक्तित्व विकसित करने की क्षमता उन लोगों में होती है, जो अपने बड़प्पन के कारण छोटों पर प्रभाव छोड़ते हैं। मनुष्य का स्वयं का चिंतन, मनन भी इस संदर्भ में काम करता है। वह अपनी इच्छा शक्ति और संकल्प शक्ति से भी अपने आपको प्रभावित करता है। पूर्व संचित संस्कार भी ऐसा वातावरण पाकर स्वतः उभरते हैं। ग्रीष्म ऋतु में घास सूख जाती है फिर भी जमीन के अंदर उसकी जड़ों में किसी प्रकार नमी बनी रहती है। वर्षा होते ही वे जड़ें अनायास ही अंकुरित हो चलती हैं और तेजी से अपना विस्तार करती हुई जमीन पर फैलकर हरीतिमा बिखेरती हैं।

यह सब वे कारण हैं जिनके बलबूते विशेष साधन न बन पड़ने पर भी मनुष्य का आत्मबल विकसित स्थिति में देखा जा सकता है और उसे भी सिद्ध पुरुषों जैसी विभूतियाँ अनायास ही प्रकट होती हुई प्रकाश में आती दृष्टिगोचर हो सकती हैं। कई व्यक्ति योग, तप, साधना, अनुष्ठान जैसे कृत्य प्रयास न करने पर भी सूक्ष्म विशेषताओं से संपन्न पाए जाते हैं। यह उपहार उन्हें जन्मजात रूप में भी मिलता है अथवा नितांत बचपन से आगे बढ़ती हुई दृष्टिगोचर होने लगती है। यह अनायास का प्रकटीकरण भी संयोगवश नहीं होता। उसके पीछे ऐसे कारण सन्निहित होते हैं जिन्हें घटनाएँ या प्रयास तो नहीं कहा जा सकता, पर अदृश्य और अविज्ञात कारण ऐसे होते हैं जिनके कारण कुछ विशेष व्यक्ति अपने में चमत्कारी क्षमताएँ प्रकट करते हैं किंतु उनके साथी पड़ौसी उन विशेषताओं से वंचित बने रहते हैं।

प्रयत्न करने पर तो उसका लाभ कोई भी उठा सकता है। साहित्यकार, संगीतज्ञ, शिल्पकार, चिकित्सक, इंजीनियर आदि विशेषज्ञ अपने में ये विशेषताएँ अभ्यास द्वारा अर्जित करते हैं। पहलवान व्यायामशालाओं में, विद्वान पाठशालाओं में, शिल्पी कारखानों में आवश्यक अभ्यास करते हुए समयानुसार सुयोग्य बनते हैं। किंतु आश्चर्य तब होता है, जब प्रशिक्षण के अभाव में अथवा स्वल्प प्रशिक्षण के सहारे किसी-किसी की प्रतिभा अनायास ही फूट पड़ती है। उदाहरण के लिए मोजार्ट ८ वर्ष की अल्पायु में ही संगीतज्ञ बन गये थे। पास्कल १२ वर्ष की उम्र में प्रख्यात गणितज्ञों की श्रेणी में गिने जाने लगे थे। १३ वर्ष की किशोरावस्था में वुडरर प्रसिद्ध कलाकार बन गये थे। संतज्ञानेश्वर ने १६ वर्ष की आयु में गीता का भाष्य किया था तो सिक्ख धर्म के प्रवर्तक गुरुनानक देव १० वर्ष की छोटी अवस्था से ही भावपूर्ण सबद की रचना करने लगे थे। इन प्रतिभाओं को देखने पर मोटी दृष्टि से सुयोग, संयोग, भाग्य, वरदान आदि समझा जाता है, पर वस्तुतः उस अनायास के पीछे भी कारण होते हैं। भले ही यह प्रत्यक्ष घटनाक्रम सामने आया हो या न आया हो।

प्रयास अभ्यास तो कई लोगों का सफल होता है। मनोयोगपूर्वक कड़ा परिश्रम करने पर तो कालिदास और वरदराज जैसे मूर्ख समझे जाने वाले व्यक्ति भी उच्चकोटि के विद्वान बन गए। सेंडो और चंदगी राम ने अपने गये-गुजरे स्वास्थ्य को ऐसा बना लिया था कि उनकी गणना विश्व के मूर्धन्य पहलवानों में होने लगी। अमेरिका का जैक ब्लाटिन पिछले दिनों कई वर्ष तक कैंसर से पीड़ित रहने के उपरांत जब किसी तरह रोगमुक्त हुआ तो वह पहलवानी पर उतर आया। संकल्प, साहस और अभ्यास के सहारे उसने अपना शरीर-बल इस स्तर तक बढ़ा लिया कि ओलंपिक कुश्ती के सुपर हैवीवेट का खिताब जीतकर न केवल अपने राष्ट्रीय गौरव को ऊँचा उठाया वरन् समूची मानव जाति के लिए एक अनूठा और प्रेरणाप्रद उदाहरण प्रस्तुत किया। यह प्रयास का प्रत्यक्ष प्रभाव है।

किंतु आश्चर्य तब होता है जब प्रत्यक्ष घटनाक्रमों के रूप में अभ्यास न किए जाने पर भी दिव्य क्षमताएँ विकसित हो जाती हैं।

विश्व में ऐसे अनेक व्यक्ति हुए हैं, जिनमें यह प्रतिभा जन्मजात रूप में विकसित पाई गई है। हालैंड का क्रोसेट नामक एक बालक बचपन से ही भविष्यवाणियाँ करने के लिए विख्यात था, उसके द्वारा किए गए भविष्य कथन शत-प्रतिशत सही उतरते थे। इजराइल का यूरीगेलर अपनी अतींद्रिय क्षमताओं के लिए प्रसिद्ध है। भविष्य दर्शन की विशेषता के कारण संसार भर में जिन लोगों ने विशेष ख्याति अर्जित की है उनमें एंडरसन, सेमवैंजोन, पीटर हरकौस, हेंसक्रेजर आदि के नाम प्रमुख हैं। नौस्ट्राडोमस तो अपनी भविष्यवाणियों के लिए विश्वविख्यात ही हैं। फ्लोरेंस स्टर्न फेल्स नामक ८ वर्षीय बालिका में दिव्य दर्शन की क्षमता अनायास ही फूट पड़ी थी। इसका पता लोगों को तब लगा, जब उसने सदियों पुरानी टूटी-फूटी एक कब्र के खोदे जाने की न केवल तिथि व समय बता दिया था वरन् उसमें सोए हुए व्यक्ति का नाम भी बता दिया था। वह कब्र विलियम जॉन्सन की थी, जिस पर किसी का नाम तक नहीं खोदा गया था और न किसी को उसकी जानकारी थी। रजिस्टर के पुराने पन्नों को पलटने पर फ्लोरेंस द्वारा दी गई जानकारी सही निकली।

वस्तुतः इस संसार में अनायास कुछ भी नहीं होता है। हाँ इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इस असाधारण प्रक्रिया के पीछे कोई अविज्ञात कारण रहे हैं, जिन्हें प्रत्यक्ष रूप में नहीं देखा जा सकता।

❏ ❏

प्राणशक्ति का संरक्षण—अभिवर्धन

आर्थिक आदान-प्रदान—शरीरगत सेवा सहयोग के सहारे परस्पर एक-दूसरे की सहायता करने, मैत्री विकसित करने एवं सद्भावना उपलब्ध करने के अनेकानेक प्रमाण सामान्य जीवन में आए दिन मिलते रहते हैं। छोटे और बड़ों में-मित्र-मित्र में, कई कारणों से, कई प्रकार के आदान-प्रदानों का सिलसिला चलता रहता है।

ऊँचे स्तर पर मनुष्य की एक विशेष क्षमता है—प्राण। यह एक प्रकार की जीवंत विद्युत है। जीवन एवं व्यक्तित्व इसी की न्यूनाधिकता में गिरता-उठता रहता है। प्राण की सीमित मात्रा सभी प्राणधारियों को समान रूप से उपलब्ध है। वे शरीर यात्रा के आवश्यक साधन इसी के सहारे जुटाते हैं और यथोचित पुरुषार्थ एवं कौशल विकसित करने में सफल रहते हैं। प्राण ऐसा तत्त्व है जो हवा की तरह भीतर भी भरा है और समस्त ब्रह्मांड में भी संव्याप्त है। उसकी अतिरिक्त मात्रा प्राणायाम प्राणाकर्षण विधान जैसे उपायों के सहारे अर्जित भी की जा सकती है।

प्राण अपनी सर्वतोमुखी समर्थता के लिए तो आवश्यक है, उसका प्रयोग उपचार दूसरों के हित-अनहित के लिए भी किया जा सकता है। योग के माध्यम से प्राणोचार का प्रयोग प्रायः सदुद्देश्यों के लिए ही होता है किंतु तांत्रिक अभिचार से इसे दूसरों को परास्त करने के लिए प्रहार रूप में भी किया जाता है। शक्ति, शक्ति ही रहेगी। उसका उपयोग किसने किस प्रकार किया यह दूसरी बात है। प्राण मानवी सत्ता की सबसे बड़ी शक्ति है। उसका उपयोग पग-पग पर होता है। जीवन-मरण के लिए—समर्थता-दुर्बलता के लिए—कायरता-साहसिकता के लिए—अवसाद और पराक्रम के लिए प्राणशक्ति की न्यूनाधिकता एवं उत्कृष्टता-निकृष्टता ही आधारभूत कारण होती है। बाहरी उपचारों से तो तनिक-सा ही सुधार परिवर्तन संभव होता है।

विचार दूर-दूर तक जा सकते हैं। उन्हें पत्रों, लेखों तथा टेप टेलीफोन आदि के माध्यम से अन्यत्र भी भेजा जा सकता है। किंतु प्राण में यह कमी है कि वह एक सीमित क्षेत्र में ही रहता है। उसका कहने लायक प्रयोग समीपवर्ती परिधि में ही हो सकता है। जैसे-जैसे दूरी बढ़ती जाती है वैसे ही प्राण प्रभाव का क्षेत्र झीना होता जाता है। किन्हीं महाप्राणों की बात दूसरी है जो अपेक्षाकृत बड़े क्षेत्र को—उसमें रहने वाले समुदाय को अनुप्राणित करें। किंतु सामान्यतया यह सचेतन ऊर्जा जलती आग की तरह निकटवर्ती को ही अधिक प्रभावित करती है। आग से दूर हटते जाने पर उसकी रोशनी भले ही दीखे पर गर्मी में तो निश्चित रूप से कमी ही होती जाएगी। प्राण की प्रकृति भी यही है।

ऋषि आश्रमों में गाय और सिंह निर्भय होकर एक घाट पानी पीते थे। किंतु उस प्रभाव परिधि से बाहर निकल जाने पर फिर वे 'आक्रामक आक्रांत' की रीति-नीति अपनाने लगते हैं। इसे प्राण शक्ति का संमोहन ही कहना चाहिए।

सान्निध्य का प्रभाव क्या पड़ता है इसका सामान्य परिणाम सत्संग और कुसंग के भले-बुरे रूप में देखा जाता है। समर्थों की निकटता असमर्थों को प्रभावित किए बिना नहीं रहती। चोर, जुआरी, लंपट, मद्य-व्यसनी, दुर्गुणी संपर्क में आने वालों को अपना छूत लगा देते हैं। यह कुसंग हुआ। सज्जनों की—प्राणवान महामानवों की निकटता भर से सहचरों में उन गुणों का एक महत्त्वपूर्ण अंश अनायास ही हस्तांतरित होता है। इसलिए अधिक समय के लिए संभव न होने पर भी लोग महामानवों के निकट तक पहुँचने का किसी न किसी बहाने कुछ-न-कुछ प्रयत्न करते रहते हैं।

यह प्राणशक्ति ही मनुष्य सत्ता की जीवनी शक्ति है। वह यदि कम हो तो मनुष्य समुचित पराक्रम कर सकने में असमर्थ रहता है और उसे अधूरी मंजिल में ही निराश एवं असफल हो जाना पड़ता है। क्या भौतिक, क्या आध्यात्मिक दोनों ही क्षेत्रों में अभीष्ट सफलता के लिए आवश्यक सामर्थ्य की जरूरत पड़ती है। इसके बिना प्रयोजन को पूर्ण कर सकना, लक्ष्य को प्राप्त कर सकना असंभव है। इसलिए कोई महत्त्वपूर्ण सफलता प्राप्त करने के लिए उसके आवश्यक साधन जुटाना आवश्यक होता है। कहना न होगा कि भौतिक उपकरणों की अपेक्षा व्यक्तित्व की प्रखरता एवं ओजस्विता कहीं अधिक आवश्यक है।

साधनों का उपयोग करने के लिए भी शौर्य, साहस और संतुलन चाहिए। बढ़िया बंदूक हाथ में पर मन में भीरुता, घबराहट भरी रहे तो वह बेचारी बंदूक क्या करेगी ? चलेगी ही नहीं, चल भी गई तो निशाना ठीक नहीं लगेगा, दुश्मन सहज ही उससे इस बंदूक को छीनकर उल्टा आक्रमण कर बैठेगा। इसके विपरीत साहसी लोग छत पर पड़ी ईंटों से और लाठियों से डाकुओं का मुकाबिला कर लेते हैं। 'साहस वालों की ईश्वर सहायता करता है' यह उक्ति निरर्थक नहीं है। सच तो यही है कि समस्त सफलताओं के मूल में प्राणशक्ति

ही साहस, जीवट, दृढ़ता, लगन, तत्परता की प्रमुख भूमिका संपादन करती है और ये सभी विभूतियाँ प्राण-शक्ति की सहचरी हैं।

प्राण ही वह तेज है जो दीपक के तेल की तरह मनुष्य के नेत्रों में, वाणी में, गतिविधियों में, भाव-भंगिमाओं में, बुद्धि में, विचारों में प्रकाश बनकर चमकता है। मानव जीवन की वास्तविक शक्ति यही है। इस एक ही विशेषता के होने पर अन्यान्य अनुकूलताएँ तथा सुविधाएँ स्वयंमेव उत्पन्न, एकत्रित एवं आकर्षित होती चली जाती हैं। जिसके पास यह विभूति नहीं उस दुर्बल व्यक्तित्व वाले की संपत्तियों को दूसरे बलवान् लोग अपहरण कर ले जाते हैं। घोड़ा अनाड़ी सवार को पटक देता है। कमजोर की संपदा—जर, जोरू, जमीन दूसरे के अधिकार में चली जाती है।

जिसमें संरक्षण की सामर्थ्य नहीं वह उपार्जित संपदाओं को भी अपने पास बनाए नहीं रख सकता। विभूतियाँ दुर्बल के पास नहीं रहतीं। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए विचारशील लोगों को अपनी समर्थता—प्राणशक्ति बनाए रखने तथा बढ़ाने के लिए भौतिक एवं आध्यात्मिक प्रयत्न करने पड़ते हैं। आध्यात्मिक प्रयत्नों में प्राण शक्ति के अभिवर्धन की सर्वोच्च प्रक्रिया गायत्री उपासना को माना गया है। उसका नामकरण इसी आधार पर हुआ है।

शरीर में प्राण शक्ति ही निरोगता, दीर्घ-जीवन, पुष्टि एवं लावण्य के रूप में चमकती है। मन में वही बुद्धिमत्ता, मेधा, प्रज्ञा के रूप में प्रतिष्ठित रहती है। शौर्य, साहस, निष्ठा, दृढ़ता, लगन, संयम, सहृदयता, सज्जनता, दूरदर्शिता एवं विवेकशीलता के रूप में उस प्राण-शक्ति की ही स्थिति आँकी जाती है। व्यक्तित्व की समग्र तेजस्विता का आधार यह प्राण ही है। शास्त्रकारों ने इसकी महिमा को मुक्त कंठ से गाया है और जन-साधारण को इस सृष्टि की सर्वोत्तम प्रखरता का परिचय कराते हुए बताया है कि वे भूले न रहें, इस शक्ति-स्रोत को—इस भांडागार को ध्यान में रखें और यदि जीवन लक्ष्य में सफलता प्राप्त करनी हो तो इस तंत्र को उपार्जित, विकसित करने का प्रयत्न करें।

गायत्री साधना मुनष्य को प्राणयुक्त बनाती और उसमें प्रखरता उत्पन्न करती है। गायत्री का अर्थ ही है प्राणों का उद्धार करने वाली। इस प्रकार

प्राणवान और विभिन्न शक्तियों में प्रखरता उत्पन्न होने से पग-पग पर सफलताएँ, सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। प्राण की न्यूनता ही समाज विपत्तियों का, अभावों और शोक-संतापों का कारण है। दुर्बल पर हर दिशा से आक्रमण होता है, दैव भी दुर्बल का घातक होता है। भाग्य भी उसका साथ नहीं देता और मृत लाश पर जैसे चील, कौए दौड़ पड़ते हैं वैसे ही तत्त्वहीन मनुष्य पर विपत्तियाँ टूट पड़ती हैं। इसलिए हर बुद्धिमान को प्राण का आश्रय लेना ही चाहिए। कहा गया है—

प्राणो वै बलम्। प्राणो वै अमृतम्। आयुर्नः प्राणः राजा वै प्राणः।
—बृहदारण्यक

प्राण ही बल है, प्राण ही अमृत है। प्राण ही आयु है। प्राण ही राजा है।

यो वै प्राणः सा प्रज्ञा, या वा प्रज्ञा स प्राणः।

—सांख्यायान

जो प्राण है, सो ही प्रज्ञा है, जो प्रज्ञा है, सो ही प्राण है।

यावद्ध्यास्मिन् शरीरे प्राणोवसति तावदायुः।

—कौषीतकि

जब तक इस शरीर में प्राण हैं तभी तक जीवन है।

प्राणो वै सुशर्मा सुप्रतिष्ठानः। **—शतपथ**

प्राण ही इस शरीर रूपी नौका की सुप्रतिष्ठा है।

एतावज्जन्मसाफल्यं देहिनाभिह देहिषु।
प्राणैरर्थैर्धिया वाचा श्रेय एवाचरेत्सवा।।

"प्राण, अर्थ, बुद्धि और वाणी द्वारा केवल श्रेय का ही आचरण करना देहधारियों का इस देह में जन्म साफल्य है।"

या ते तनूर्वाचि प्रतिष्ठिता या श्रोत्रे या च चक्षुषि।
या च मनसि संतताशिवां तां कुरुमोत्क्रमीः।।

'हे प्राण! जो तेरा रूप वाणी में निहित है तथा जो श्रोत्रों, नेत्रों तथा मन में निहित है, उसे कल्याणकारी बना, तू हमारी देह से बाहर जाने की चेष्टा मत कर।'

प्राणस्येद वशे सर्व त्रिदिवे यत् प्रतिष्ठितम्।
मातेव पुत्रान रक्षस्व प्रज्ञां च विधेहिन इति।।

"हे प्राण! यह विश्व और स्वर्ग में स्थित जो कुछ है, वह सब आपके ही आश्रित है। अतः हे प्राण ! तू माता-पिता के समान हमारा रक्षक बन, हमें धन और बुद्धि दे।"

व्यक्ति का व्यक्तित्व ही नहीं, इस सृष्टि का कण-कण इसी प्राण शक्ति की ज्योति से ज्योतिर्मय हो रहा है। जहाँ जितना जीवन है, प्रकाश है, उत्साह है, आनंद है, सौंदर्य है; वहाँ उतनी ही प्राण की मात्रा विद्यमान समझनी चाहिए। उत्पादन शक्ति और किसी में नहीं, केवल प्राण में ही है। जो भी प्रादुर्भाव, सृजन, आविष्कार, निर्माण और विकासक्रम चल रहा है, उसके मूल में परब्रह्म की यही परम चेतना काम करती है। जड़ पंच तत्त्वों के चैतन्य की तरह सक्रिय रहने का आधार यह प्राण ही है। परमाणु उसी से सामर्थ्य ग्रहण करते हैं और उसी की प्रेरणा से अपनी धुरी तथा कक्षा में भ्रमण करते हैं। विश्व ब्रह्मांड में समस्त ग्रह-नक्षत्रों की गतिविधियाँ इसी प्रेरणा शक्ति से प्रेरित हैं। उपनिषदकार ने कहा है—

प्राणाद्धये व खल्विमान भूतानि जायन्ते।
प्राणानि जातानि जीवन्ति। प्राण प्रयस्त्यभि
संविशन्तीति। —तैन्तरीय

प्राण शक्ति से ही समस्त प्राणी पैदा होते हैं। पैदा होने पर प्राण से ही जीते हैं और अंततः प्राण में ही प्रवेश कर जाते हैं।

सर्वाणि हवा इमानि भूतानि प्राणमेवा।
भिशं विशन्ति, प्राणमयुम्युञ्जि हते।। —छान्दोग्य

ये सब प्राणी, प्राण में से ही उत्पन्न होते हैं और प्राण में ही लीन हो जाते हैं।

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा, च परा च पथिभिश्चरन्तम।
स सध्रीचीः स विषूचीर्वसा न आवरीवर्ति भुवनेष्यन्तः।।

(ऋग्० १-१६४-३१)

"मैंने प्राणों को देखा है—साक्षात्कार किया है। यह प्राण सब इंद्रियों का रक्षक है। यह कभी नष्ट होने वाला नहीं है। यह भिन्न-भिन्न मार्गों अर्थात् नाड़ियों से आता, जाता है। मुख और नासिका द्वारा

क्षण-क्षण में इस शरीर में आता है और फिर बाहर चला जाता है। यह प्राण शरीर में वायु रूप में है, पर अधिदैवत रूप से यह सूर्य है।"

विश्वव्यापी यह प्राणशक्ति जहाँ जितनी अधिक मात्रा में एकत्र हो जाती है। वहाँ उतनी ही सजीवता दिखाई देने लगती है, मनुष्य में इस प्राणतत्त्व का बाहुल्य ही उसे अन्य प्राणियों से अधिक बुद्धि विचारवान, अधिक बुद्धिमान, गुणवान, सामर्थ्यवान एवं सुसभ्य बना सका है। इस महान शक्ति पुंज पुत्र को केवल प्रकृति-प्रदत्त साधनों के उपभोग तक ही सीमित रखा जाए तो केवल शरीर मात्रा ही संभव हो सकती है और अधिकांशतः नर-पशुओं की तरह केवल सामान्य जीवन ही जिया जा सकता है पर यदि उसे अध्यात्म विज्ञान के माध्यम से अधिक मात्रा में बढ़ाया जा सके तो गई-गुजरी स्थिति से ऊँचे उठकर उन्नति के उच्च शिखर तक पहुँचना संभव हो सकता है। हीन स्थिति में पड़े रहना मानव जीवन में सरलतापूर्वक मिल सकने वाले आनंद, उल्लास से वंचित रहना, मनोविकारों और उनकी दुःखद प्रतिक्रियाओं से विविध विधि कष्ट-क्लेश सहते रहना, यही तो नरक है। देखा जाता है कि इस धरती पर रहने वाले अधिकांश नर-तनुधारी नरक की यातनाएँ सहते हुए ही समय बिताते हैं। आंतरिक दुर्बलताओं के कारण सभी महत्त्वपूर्ण सफलताओं से वंचित रहते हैं। इस स्थिति से छुटकारा पाने के लिए प्राण तत्त्व का संपादन करना आवश्यक है।

❑ ❑

प्राणशक्ति और वैज्ञानिक अभिमत

डा० थेरेसे ब्रॉस ने निमोग्राफिक और कार्डियोग्राफिक मशीन से योग की स्थिति में अध्ययन से पाया है कि योगी द्वारा अपने हृदय पर नियंत्रण करने से हृदय की धड़कन बंद हो जाती है और आइसो इलेक्ट्रिक ग्राफ पर इसका मापन नहीं किया जा सकता। परंतु नियंत्रण हटा देने पर यह धड़कन नॉरमल हो जाती है और योगी

की इच्छा के अनुसार इसकी वोल्टेज बढ़ भी जाती है। यह प्रभाव योगी की प्राण शक्ति की इच्छानुसार प्रयोग का है।

विज्ञान द्वारा यह पाया गया है कि श्वास से खींचे गए ऑक्सीजन की शक्ति (ऋणात्मक आयन्स) को फेंफड़े की महीन नलिकाएँ कोलोइड्स को भेज देती हैं जिससे यह यौगिक नियंत्रण हो पाता है। योगी बिना शरीर विज्ञान की जानकारी के इस तरह शारीरिक क्रियाओं पर पूर्ण नियंत्रण कर लेते हैं। फिर भी पूर्ण स्वस्थ रहते हैं और सुख शांति से भरपूर रहते हैं, उनका स्वस्थ रहना असंभव था, यदि वे शारीरिक नियमों का पालन न करते होते।

विज्ञान को अब विश्वास हो गया है कि वातावरण में संव्याप्त प्राण बिजली के कणों द्वारा आवेक्षित हैं, विशेषकर ऋण आयनों द्वारा और शरीर द्वारा ग्रहण किया गया प्राण का शरीर में ही वास्तविक चयापचय होता है। इस प्राण के पूर्ण रहस्य को जानने के लिए विज्ञान उत्सुक है। स्ट्रासबर्ग की चिकित्सा अकादमी के प्रोफेसर और जीव भौतिकी संस्थान के डायरेक्टर फ्रेड वैलेस ने अपनी पुस्तक "द वायोलाजिकल कंडिशन्स क्रीएटेड बाई द इलेक्ट्रिकल प्रापर्टीज ऑफ द एटमॉसफियर" में इस संबंध में पूर्ण वैज्ञानिक जानकारी लिखी है।

भू भौतिकी विज्ञानियों ने प्रयोगों से पाया है कि पृथ्वी की ऊपरी सतह ऋण आवेशित है और ऊपरी वायुमंडल धनात्मक है। हमारा प्राणवान, वायुमंडल ऊर्ध्वाकार विद्युतीय क्षेत्र है जिसमें प्रतिमीटर अल्टीट्यूड में १०० से १५० वोल्ट बिजली है। चीनी वैज्ञानिक सूली० डी० मोरेंट के अनुसार चीन के "यांग" और "थिन" परक विचार इस संबंध में महत्त्वपूर्ण हैं। शांत वातावरण धनात्मक होता है। इसे चीनी "यांग" कहते हैं, जो कि सूर्य और तारों के कारण होता है। ऋणात्मक आवेश पृथ्वी के कारण होती है जिसे वे 'यिन' कहते हैं। सोलहवीं सदी की चीनी पुस्तक के अनुसार यांग हल्की और शुद्ध होती है। यह शक्ति ऊपर की ओर बढ़ती है जिससे आकाश बना है। यिन भारी और मोटी है जिससे पृथ्वी बनी है। आकाश की शक्ति ऊपर है और पृथ्वी की शक्ति वनस्पति में नीचे है।

यह प्राण शक्ति समय, स्थान और परिस्थितियों के अनुसार कम या अधिक होती रहती है।

सूर्य और तारे भी प्राणशक्ति को प्रभावित करते हैं। प्राण शक्ति में दो तरह के आयन्स होते हैं—

(१) ऋण आवेश युक्त, छोटे अधिक क्रियाशील, जो शरीर के सेल्स को शक्ति देते हैं और वायुमंडल से प्राणियों को प्राप्त होते हैं। स्वच्छ आवोहवा में प्रत्येक बड़े आयन के साथ दो या तीन ये छोटे आयन्स होते हैं। ऋण आयन्स, धूल, धुआँ, कोहरा और गंदी हवा से नष्ट होते हैं।

(२) बड़े, मंद, अनेक अणुओं वाला न्यूक्लियस वाला आयन। ये गंदे स्थानों पर अधिक होते हैं। ये वातावरण से छोटे आयन्स में मिल जाते हैं और अनेक आयन्स के मेल से बड़े आयन्स बनाते हैं। इनके बढ़ने से क्रियाशील (प्राणवान) छोटे आयन्स वातावरण में कम हो जाते हैं।

इन वैज्ञानिक निष्कर्षों से योगियों का यह कथन प्रामाणित होता है कि प्राण कोई ऑक्सीजन, नाइट्रोजन या रसायन नहीं है। बड़े आयनों की अधिकता के कारण ही शहर की हवा प्राणवान और स्फूर्तिदायक नहीं होती। धूल, कल-कारखानों एवं कारों से निकलने वाली गैस के समान ही हानिकारक है, क्योंकि यह प्राण को नष्ट कर देती है। एयर कंडीशन्स जगहों में भी प्राण नहीं पाए जाते, सिर्फ धूल का प्रवेश वहाँ रुकता है। धुआँ और कोहरा भी इसी तरह प्राणहीन होते हैं।

प्राण शक्ति का मुख्य स्रोत सूर्य के शार्ट वेव्ह इलेक्ट्रोमैग्नेटिक रेडिएशन्स हैं। वातावरण के क्रियाशील ऋण आवेशित आयन्स इसी के परिणाम हैं। यही मनुष्यों, जीव-जंतुओं, वनस्पति, पेड़-पौधों, अणु-परमाणुओं, प्रोटान्स, न्यूट्रान्स एवं समस्त पदार्थों की प्राणशक्ति (जीवनी शक्ति) है। प्राणवान ऋणात्मक आयनों का दूसरा प्रमुख स्रोत ब्रह्मांडीय किरणें हैं जो लगातार दिन-रात आती हैं।

ये शक्तिशाली ऋण आवेशी आयन्स पानी के लहराने और वाष्पीकरण से भी अधिक मात्रा में निकलते हैं, इसीलिए समुद्री हवा उत्साहवर्द्धक होती है। समुद्री तूफानों और धूल की अनुपस्थिति में

भी ये अधिक होते हैं। समुद्र के किनारों और समुद्र में हम प्राण से स्नान करते हैं और इससे हमारे क्रियाशील एवं अति संवेदना वाले अंग अधिक पुष्ट होते हैं। चिड़चिड़े और स्नायविक लोगों को भी समुद्री हवा लाभप्रद है। प्राणायाम का उद्देश्य भी इस क्रियाशील आयन्स की शक्ति को ग्रहण करना, उन्हें अन्यान्य अंगों में भेजना एवं शक्ति अर्जित करना है।

अन्न और जल के चयापचय प्रणालियों की तरह मानव शरीर में विद्युत (प्राण) के चयापचय की प्रणाली भी है। पाश्चात्य वैज्ञानिक वैलेस के अनुसार मनुष्य इस प्राण शक्ति के क्रियाशील ऋण आवेशी आयन्स को प्राप्त करके ऋण आवेशी हो जाता है। इस प्राण प्रणाली की शक्ति पर ही दूसरी प्रणालियाँ काम करती हैं। श्वाँस द्वारा ली गई वायु से मनुष्य इन ऋण आवेशी आयन्स को तब तक ग्रहण करता है, जब तक वे अधिक होने के कारण त्वचा से बाहर नहीं निकलते। वैलेस ने अपने प्रयोगों में पाया है कि हमारे अंग ऋण आवेशी आयनों से क्रियाशील रहते हैं और इनकी वृद्धि से उसकी जीवनी शक्ति बढ़ती, स्फूर्ति एवं साहस में वृद्धि होती है। इस तरह पाश्चात्य विज्ञान पूर्णतः भारतीय योगियों के प्राण संबंधी सिद्धांतों की पुष्टि करता है।

यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि गहरी और लंबी श्वाँस लेने से हमें अधिक हवा मिलती है और हम अधिक प्राण पाते हैं। इससे नर्वस सिस्टम फेफड़ों को हवा प्रदूषण करने के लिए उत्तेजित करता है। नासिका के नर्वस में थोड़ा भी विक्षेप पूरे श्वसनांगों पर बहुत प्रभाव डालता है—यथा छींक। इसलिए प्राणायाम के द्वारा नथुनों को अधिक फैलाकर अधिक वायु ग्रहण करने का हम अभ्यास करें। इससे हमें अधिक प्राण मिलेगा और हमारे मन एवं अंग सशक्त तथा स्फूर्तिवान बने रहेंगे। लगातार अभ्यास से हम यह सतत् लाभ उठा सकते हैं।

इस गहरे श्वास से हमें दस प्रतिशत हवा अधिक मिलती है। प्रति मिनट १८ श्वास के हिसाब से एक वर्ष में हम पाँच लाख लीटर हवा अधिक पाएँगे जो हमारे श्वसनांगों एवं अन्यान्य अंगों को अधिक शक्तिशाली बनाएगी। अभ्यास होने पर यह सुगम होगा और श्वास-प्रश्वास प्रक्रिया इससे अधिक नियमित होगी।

डा० वैलेस के अनुसार मानव शरीर में बिजली (प्राण) के चयापचय से अनेक बातें मालूम होती हैं। ऋण आयन्स का पाचन शरीर के अंगों को क्रियाशील रखने के लिए अति आवश्यक है और क्षतिग्रस्त आयनों का शरीर से निष्कासन भी उतना ही जरूरी है।

वैलेस का कथन है कि यह प्राण सूर्य की अल्ट्रावॉयलेट किरणों (परा बैंगनी किरणों) की फोटोकेमिकल (प्रकाश रसायन) क्रिया के द्वारा प्राप्त होती है। सूर्य स्नान हमारे विद्युत चयापचय को क्रियाशील बनाकर हमें अधिक शक्ति (स्फूर्ति) देता है। शरीर को पृथ्वी से पृथक (इन्सुलेटेड) नहीं रखना चाहिए क्योंकि लगातार क्रियाशील ऋण आयन्स का प्रवाह तब शरीर में नहीं हो सकेगा। प्राणियों के फरवाली चमड़ी से उनमें प्राण अधिक आकर्षित होता है और सुरक्षित बना रहता है। मनुष्य के शरीर में कपड़े पहनने से वह इन्सुलेटेड हो जाता है और क्रियाशील आयन्स का लाभ नहीं उठा पाता। इससे वह सुस्त और रोगग्रस्त होता है। अच्छा यही है कि प्राणायाम की विज्ञान समस्त प्रक्रिया हर क्षण अपनाते रहा जाए।

❑ ❑

मानवी काया एक उच्चस्तरीय विद्युत्भांडागार

विद्युत ऊर्जा के सहारे यंत्र-उपकरणों के संचालन की बात सर्वविदित है, पर प्रायः यह कम लोग ही जानते हैं कि मानवी शरीर एक शक्तिशाली यंत्र है और उसके सुसंचालन में जिस ऊर्जा की आवश्यकता होती है, वह एक प्रकार की विशिष्ट विद्युत ही है। अध्यात्म की भाषा में इसे "प्राण" कहते हैं। यह एक अग्नि है जिसे ज्वलंत रखने के लिए ईंधन की आवश्यकता पड़ती है। प्राण रूपी शरीराग्नि आहार से ज्वलंत बनी रहती है। प्राणियों में संव्याप्त इस ऊर्जा को वैज्ञानिकों ने "जैवविद्युत" नाम दिया है। शरीर संचार की समस्त गतिविधियाँ तथा मस्तिष्कीय हलचलें रक्त मांस जैसे साधनों से नहीं, शरीर में संव्याप्त विद्युत-प्रवाह द्वारा परिचालित होती हैं। यही जीवन तत्त्व बनकर रोम-रोम में व्याप्त है। उसमें चेतना और संवेदना

के दोनों तत्त्व विद्यमान हैं। विचारशीलता उसका विशेष गुण है। मानवी विद्युत की यह मात्रा जिसमें जितनी अधिक होगी वह उतना ही ओजस्वी, तेजस्वी और मनस्वी होगा। प्रतिभाशाली, प्रगतिशील, शूरवीर, साहसी लोगों में इसी क्षमता की बहुलता होती है। काय-कलेवर में इसकी न्यूनता होने पर विभिन्न प्रकार के रोग शीघ्र ही आ दबोचते हैं। मनःसंस्थान में इसकी कमी होने से अनेक प्रकार के मनोरोग परिलक्षित होने लगते हैं।

'जैव विद्युत' उस भौतिक बिजली से सर्वथा भिन्न है जो विद्युत यंत्रों को चालित करने के लिए प्रयुक्त होती है। मानवी प्राण विद्युत का सामान्य उपयोग शरीर को गतिशील तथा मन, मस्तिष्क को सक्रिय रखने में होता है। असामान्य पक्ष मनोबल, संकल्पबल, आत्मबल के रूप में परिलक्षित होता है जिसके सहारे असंभव प्रतीत होने वाले काम भी पूरे होते देखे जाते हैं। "ट्रांसफार्मेशन ऑफ एनर्जी" सिद्धांत के अनुसार मानवी विद्युत सूक्ष्मीभूत होकर प्राण ऊर्जा और आत्मिक ऊर्जा के रूप में संगृहीत और परिशोधित-परिवर्तित हो सकती है। इस ट्रांसफॉर्मेशन के लिए ही प्राणानुसंधान करना और प्राण साधना का अवलंबन लेना पड़ता है।

जैव भौतिकी के नोबुल पुरस्कार प्राप्त प्रख्यात वैज्ञानिक हाजकिन हक्सले और एक्लीस ने मानवी ज्ञान-तंतुओं में काम करने वाले विद्युत आवेगों की खोज की है। इनके प्रतिपादनों के अनुसार ज्ञान तंतु एक प्रकार के विद्युत संवाही तार हैं, जिनमें निरंतर बिजली दौड़ती रहती है। पूरे शरीर में इन धागों को समेटकर एक लाइन में रखा जाए तो उनकी लंबाई एक लाख मील से भी अधिक बैठेगी। इस प्रकार इतने बड़े तंत्र को विभिन्न दिशाओं में गतिशील रखने वाले यंत्र को कितनी अधिक बिजली की आवश्यकता पड़ेगी, यह विचारणीय है।

मूर्धन्य वैज्ञानिक डा० मेटुची वैनबर्ग ने अपने अनुसंधान निष्कर्ष में कहा है कि मानवी काया के आंतरिक संस्थानों में विद्युत शक्ति रूपी खजाने छिपे हैं। इनकी प्रकट क्षमता की जानकारी मांशपेशियों के सिकुड़ने-फैलने से उत्पन्न विद्युत धाराओं से होती है। इस संदर्भ में अँग्रेज वैज्ञानिक वाल्टर ने भी बहुत खोजें कीं और उन खोजों का लाभ चिकित्सा जगत को प्रदान किया है।

तंत्रिका विशेषज्ञों के अनुसार प्रत्येक न्यूरॉन का एक छोटा डायनेमो है। काय विद्युत का उत्पादन मुख्यतया यही वर्ग करता है। इसका केंद्र संस्थान मस्तिष्क है। एक सामान्य स्वस्थ युवा व्यक्ति का मस्तिष्क २० वाट विद्युत उत्पन्न करता है जिससे उसके शरीर की समस्त गतिविधियाँ संचालित होती हैं। सामान्य जाँच प्रक्रिया में हृदय कोशिकाओं में विद्यमान इस बिजली का प्रयोग ई० सी० जी० में, मांसपेशियों की विद्युत का ई० एम० जी० में तथा ब्रेन सेल्स की विद्युत का ई० ई० जी० में प्रयोग किया जाता है।

वैज्ञानिकों का कहना है कि मानवी काया एक उच्चस्तरीय परमाणु बिजलीघर है। इससे प्राण विद्युत तरंगों का निरंतर कम या अधिक मात्रा में विकिरण होता रहता है। येल विश्वविद्यालय के सुप्रसिद्ध चिकित्साशास्त्री हेराल्ड बर्र ने अपने शोध निष्कर्ष में बताया है कि प्रत्येक जीवधारी अपने-अपने स्तर के अनुरूप कम या अधिक विभव वाली विद्युत उत्पन्न करता है। मनुष्यों में पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं में इसकी मात्रा अधिक होती है। इस मानवीय विद्युत शक्ति को उन्होंने "लाइफ फील्ड" के नाम से संबोधित किया है। उनके अनुसार व्यक्तित्व के आधार पर प्रत्येक व्यक्ति का अलग-अलग लाइफ फील्ड होता है। जैव क्रियाओं से संबंधित होने के कारण उसमें परिवर्तन होता रहता है। आवेशग्रस्त होने अथवा घृणा, ईर्ष्या की स्थिति में मनुष्य शरीर से बिजली की सर्वाधिक क्षति होती है।

मूर्धन्य परामनोविज्ञानियों ने भी अपने विभिन्न अनुसंधानों के आधार पर यह पाया है कि सामान्य मनुष्य के सूक्ष्म शरीर से निःसृत होने वाली वैद्युतीय तरंगें उसके स्थूल शरीर से छह इंच बाहर तक फैली रहती हैं। पूर्ण स्वस्थ एवं पवित्र अंतःकरण वाले व्यक्ति के शरीर से निकलने वाली इन तरंगों का विकिरण तीन फुट दूर तक फैला रहता है। इसे उन्होंने मानवी तेजोवलय की संज्ञा दी है और कहा है कि मनुष्य जिस स्थान पर निवास करता या साधना-उपासना करता है काया से निःसृत प्राण विद्युत का अदृश्य कंपन वहाँ स्थित जड़ पदार्थों के परमाणुओं में तीव्र प्रकंपन पैदा कर देता है। मनुष्य शरीर से निकली विद्युत तरंगें आस-पास के वातावरण में छा जाती हैं और जड़ चेतन दोनों को प्रभावित, आकर्षित करती हैं।

प्रख्यात वैज्ञानिक डा० ब्राउन के मतानुसार एक स्वस्थ नवयुवक के शरीर और मस्तिष्क में व्याप्त विद्युत शक्ति से एक बड़ी मिल को संचालित किया जा सकता है, जबकि छोटे बच्चे के शरीर में सन्निहित विद्युत ऊर्जा से एक रेलगाड़ी का इंजन चल सकता है। इस विद्युत शक्ति को उन्होंने "बायोलाजिकल इलेक्ट्रिसिटी" कहा है। उनके अनुसार यह जैव विद्युत मनुष्य के सूक्ष्म शरीर से उत्पन्न होती है और स्थूल काया समेत समस्त गतिविधियों का नियंत्रण नियमन करती है। मस्तिष्क से लेकर अंगुलियों पर्यन्त इसी का आधिपत्य होता है। नेत्र सहित सभी इंद्रियाँ इस शक्ति के प्रमुख विकिरण केंद्र हैं। सर जान वुडरफ ने भी अपनी पुस्तक "सर्पेंटाइनपावर" में बताया है कि नेत्र और हाथ-पैरों की अंगुलियों के पोरों पर प्राण विद्युत का विकिरण विशेष अनुपात में पाया जा सकता है।

शरीर में काम करने वाली जैव विद्युत में कभी-कभी व्यतिरेक होने से गंभीर संकटों का सामना करना पड़ता है। भौतिक बिजली का जैव विद्युत में परिवर्तन असंभव है, पर जैव विद्युत के साथ भौतिक बिजली का सम्मिश्रण बन सकता है। कई बार ऐसी विचित्र घटनाएँ देखने में आयी हैं, जिनमें मानवी शरीरों को एक जेनरेटर डायनामो के रूप में काम करते पाया गया।

सन् १९३४ में इटली के पिरानी अस्पताल में एक ऐसी ही घटना घटित हुई अन्नामोनारी नामक एक महिला के शारीरिक कोशिकाओं में बिजली रिसने लगी। शरीर को छूते ही बिजली के नंगे तारों की भाँति तेज झटका लगता था। बिजली का यह उत्पादन सीने के एक वृत्ताकार भाग में विशेष रूप से अधिक होता था। गहन निद्रा के समय सीने पर एक वृत्ताकार गैलेक्सी भी कुछ समय तक छायी रहती थी। यह प्रकाश पुंज कुछ सप्ताह तक बना रहा। इस घटना की जाँच-पड़ताल विभिन्न वैज्ञानिकों, चिकित्साशास्त्रियों एवं भौतिक-विदों द्वारा की गई, पर रहस्य पर से पर्दा नहीं उठ सका। अन्नामोनारी की जाँच कर रहे मूर्धन्य वैज्ञानिक डा० के० सेग के कथनानुसार इस प्रकार की घटनाएँ शरीर में 'इलेक्ट्रोमैग्नेटिक इंडक्शन' के कारण होती हैं। अन्य वैज्ञानिकों का अभिमत था कि त्वचा में कुछ रासायनिक प्रक्रियाएँ इसके लिए जिम्मेवार हैं। किसी ने

इसे "हाईवोल्टेज सिण्ड्रोम" कहा तो किसी ने इसे "साइकोकाइनेटिक शक्ति" के नाम से संबोधित किया।

"सोसायटी ऑफ सायकिकलरिसर्च" द्वारा प्रस्तुत एक विवरण के अनुसार केवल अमेरिका में ही २० से अधिक ऐसे व्यक्ति पाए गए हैं जिनके शरीर से सतत् विद्युत धाराएँ निकली थीं। तलाश करने पर वे संसार के अन्य भागों में भी मिल सकते हैं। फ्रांसीसी भौतिक विद् फ्रैन्क्वाइसएरैंगों ने अपने देश के "ला पेरियर" शहर की ऐन्जोलिक कोटिन नामक विद्युत महिला का तथा डा० एफ० काफ्ट ने आयरलैंड की जे० स्मिथ का अध्ययन किया था और घटना को प्रामाणिक बताया था। कोलोरेडो के मूर्धन्य वैज्ञानिक डब्लू० पीजोन्स एवं उनके सहयोगी नार्मन लॉग ने भी इस संदर्भ में गहन अनुसंधान किया है और इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि वस्तुतः ये घटनाएँ शारीरिक व्यतिरेक के परिणामस्वरूप घटित होती हैं। कोशिकाओं में अधिक विद्युत उत्पादन होने पर वह शरीर से बाहर निकलने लगती हैं। यदि इस बढ़ी हुई विद्युत शक्ति के सुनियोजन की कला ज्ञात हो सके तो मनुष्य अतींद्रिय क्षमताओं का धनी बन सकता है।

विभिन्न प्रयोग-परीक्षणों के आधार पर यह प्रमाणित किया जा चुका है कि काया के सूक्ष्म केंद्रों के इर्द-गिर्द प्रवाहमान विद्युतधारा ही सुखानुभूति का निमित्त कारण है। वैज्ञानिकों का कहना है कि वैद्युतीय प्रकंपनों के बिना किसी प्रकार की सुख संवेदना का अनुभव नहीं किया जा सकता। पदार्थों के संयोग से उत्पन्न होने वाली प्रतिक्रियाएँ एवं अनुभूतियाँ उनके अभाव में विद्युत कंपनों से भी पैदा की जा सकती हैं। परामनोविज्ञानियों की भी यही मान्यता है कि सुख-दुःख की अनुभूतियाँ जैव विद्युत तरंगों पर निर्भर करती हैं। शारीरिक परिपुष्टता और मानसिक उत्कृष्टता का अन्योन्याश्रित संबंध है। एक के पूर्ण स्वस्थ होने पर दूसरे का स्वस्थ होना सुनिश्चित है। गुण, कर्म, स्वभाव में उच्चस्तरीय उत्कृष्टता जीवन में समस्वरता पैदा करती है, फलतः प्राण विद्युत की सशक्तता बढ़ती है, जिससे मनुष्य को असीम सुख-शांति की अनुभूति होती है।

मानवी विद्युत प्रवाह ही एक-दूसरे को आकर्षित प्रभावित करता है। शिर और नेत्रों में यह विशेष रूप से सक्रिय पाया जाता है। वाणी

की मिठास, कड़ा होना अथवा प्रामाणिकता में उसका अनुभव किया जा सकता है। तेजस्वी मनुष्य के विचार ही प्रखर नहीं होते, उनकी आँखें भी चमकती हैं और उनकी वाणी अंतर की गहराई तक घुस जाने वाला विद्युत प्रवाह उत्पन्न करती है। उभरती आयु में यही प्राण विद्युतकाय आकर्षण की भूमिका निभाती है। सदुपयोग होने पर प्रतिभा, प्रखरता, प्रभावशीलता के रूप में विकसित होकर कितने ही महत्त्वपूर्ण कार्य करती है और दुरुपयोग होने पर मनुष्य निस्तेज, छूँछ एवं अवसादग्रस्त रहने लगता है। ऊर्ध्वरता संयमी, विद्वान, वैज्ञानिक, दार्शनिक, योगी, तपस्वी जैसी विशेषताओं से संपन्न व्यक्तियों के बारे में यही कहा जा सकता है कि उन्होंने अपनी प्राण विद्युत का अभिवर्धन, नियंत्रण एवं सदुपयोग किया है।

किस व्यक्ति में कितनी मानवी विद्युत शक्ति विद्यमान है, इसका परिचय उसके चेहरे के इर्द-गिर्द और शरीर के चारों ओर बिखरे हुए तेजोवलय को देखकर प्राप्त किया जा सकता है। यह आभा मंडल खुली आँखों से नहीं देखा जा सकता वरन् सूक्ष्म दृष्टि संपन्न व्यक्ति ही इसे अनुभव कर पाते हैं। अब ऐसे यंत्र भी विकसित कर लिए गए हैं, जो मानव शरीर में पाई जाने वाली विद्युत शक्ति और उसके विकिरण का विवरण प्रस्तुत करते हैं। किर्लियन फोटोग्राफी तथा आर्गान एनर्जी के मापन को इस संदर्भ में महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है।

निःसंदेह मनुष्य एक जीता जागता बिजलीघर है, किंतु झटका मारने वाली—बत्ती जलाने वाली सामान्य बिजली की तुलना उससे नहीं की जा सकती। जड़ की तुलना में चेतन की जितनी श्रेष्ठता है उतना ही भौतिक और जीवन विद्युत में अंतर है। प्राण विद्युत असंख्यगुनी परिष्कृत और संवेदनशील है। उसके सदुपयोग एवं दुरुपयोग के भले-बुरे परिणामों को ध्यान में रखते हुए यदि प्राण विद्युत पर नियंत्रण, परिशोधन, उसका संचय-अभिवर्धन किया जा सके तो मनुष्य असामान्य शक्ति का स्वामी बन सकता है। अभी तो वैज्ञानिक स्थूल विद्युत के चमत्कार जानकर ही हतप्रभ हैं। यदि कायापिंड में विद्यमान इस जखीरे को विस्तार से जाना समझाया जा सके तो अविज्ञात के रहस्योदघाटन के क्षेत्र में एक नया आयाम खुलता है।

➢ प्राणाग्नि का प्रकटीकरण

मानव शरीर के अंदर भरी पड़ी प्राणाग्नि के भांडागार की जानकारी विज्ञान जगत को आधुनिक उपकरणों की सहायता से आज मिल पाई है। इस संबंध में उपनिषदकार पहले ही लिख चुके हैं कि—

"इस ब्रह्मपुरी यानी शरीर में प्राण ही कई तरह की अग्नियों के रूप में जलता है।" **—प्रश्नोपनिषद्**

प्राण को अंगारा व प्राणाग्नि को उससे निकलने वाली ताप ऊर्जा-धधकती लौ के रूप में समझा जा सकता है। जड़-जगत में वेवक्वांटम (तरंगों) के रूप में तथा चेतन जगत में विचारणा एवं संवेदना के रूप में व्याप्त यह प्राण-प्रवाह वस्तुतः विद्युत ऊर्जा का सूक्ष्मतम स्वरूप है। अदृश्य अंतरिक्ष जगत से अनुदान रूप में प्राप्त ब्राह्मी प्राणशक्ति को मानव शरीर सतत् ग्रहण करता है—अवशोषित करता तथा निःस्सृत करता रहता है। इसका संचय ही प्राण निग्रह कहलाता है, जो व्यक्ति को ओजस्वी, तेजस्वी, मनस्वी बना देता है। क्षरित होने पर यही शिथिल जीवनी शक्ति, निरुत्साह, रुग्णता, हताशा, अवसाद के रूप में प्रकटीकृत होती है। संयमी ब्रह्मचारी तपस्वी उसे बढ़ाते चलते हैं और अभिवृद्धि का परिचय बढ़ी-चढ़ी प्रतिभा प्रखरता के रूप में देते हैं।

प्राण विद्युत चेहरे पर आँखों में इसी की चमक होती है। वाणी में मिठास भी इसी की होती है और सिंह जैसी गर्जन भी। दूसरों पर प्रभाव डालना इसी के माध्यम से बन पड़ता है। प्राण विद्युत संपर्क में आने वालों को चुंबक की तरह खींचती और अपनी विशेषताओं से प्रभावित करती है। ऋषि आश्रमों के गर्द-गिर्द उनमें निवासियों का प्राण छाया रहता है और उसका प्रभाव हिंस्र-पशुओं तक पड़ता है। सिंह गाय एक घाट पानी पीने की घटनाएँ ऐसे ही क्षेत्रों में दृष्टिगोचर होती हैं। नारद के प्रभाव से वाल्मीकि और बुद्ध के सान्निध्य में अंगुलिमाल का काया-कल्प हो जाना ऐसे ही प्रचंड प्राण प्रहार का प्रतिफल है। कुसंग और सत्संग में यही प्राण ऊर्जा विशेष रूप से काम करती है।

यह प्राणाग्नि कई बार प्रयत्नपूर्वक प्रकट की जा सकती है और कई बार अनायास ही अप्रत्याशित रूप से उभरती है। पौराणिक गाथा के अनुसार शिव पत्नी सती ने पितृगृह में अपने शरीर से ही योगाग्नि प्रकट करके शरीर दाह किया था। अन्य योगियों के बारे में भी ऐसी ही गाथाएँ मिलती हैं जिन्होंने शरीरांत के समय अन्य किसी के द्वारा अंत्येष्टि किये जाने की प्रतीक्षा न करके अपने भीतर से ही अग्नि प्रकट की थी और काया को भस्मसात कर लिया था। शाप देकर दूसरों को भस्म कर देने के तो कितने ही कथानक हैं ? शिव ने कामदेव को भस्म कर दिया था और दमयंती के शाप से व्याध जलकर भस्म हो गया था। भस्मासुर ने तो इस विशिष्टता को अपनी तपस्या के सहारे एक सिद्धि के रूप में ही प्राप्त कर लिया था वह किसी पर भी हाथ रखकर उसे भस्म कर सकता था।

यह प्राणाग्नि के प्रयत्नपूर्वक किए गए प्रयोग हुए। इसके पीछे कुछ उद्देश्य और प्रयोग भी हैं पर आश्चर्य तब होता है जब यह कायिक ऊर्जा अनायास ही किसी-किसी के शरीर से फूट पड़ती है और अपनी काया को ही नहीं समीपवर्ती सामान को भी जलाने लगती है।

इस संबंध में शास्त्रकार का कथन है—

एषोऽग्निस्तपत्येष सूर्य एषपर्जन्यो मघवानष्।
एष पृथिवी रयिर्देवः सद्सच्चामृतं चयत्।।

—प्रश्नोपनिषद् २।५

यह प्राण ही शरीर में अग्नि रूप धारण करके तपता है, यह सूर्य, मेघ, इंद्र, वायु, पृथ्वी तथा भूत समुदाय है। सत असत तथा अमृत स्वरूप ब्रह्म भी यही है। शरीर में यह कई तरह की अग्नियों के रूप में जलता है। यह अग्नि जठराग्नि हो सकती है, यज्ञ में वर्णित तीन दिव्य अग्नियाँ आयुर्वेद वर्षित प्राकृत अग्नि विज्ञान की तेरह अग्नियाँ अथवा योगाग्नि के रूप में प्राण शक्ति का समुच्चय कुंडलिनी हो सकती है। अपने-अपने भिन्न-भिन्न रूप में यह बहिरंग में प्रकट होती रहती है एवं कभी आँखों से, कभी भाव-भंगिमा द्वारा, कभी वाक्शक्ति के माध्यम से एवं कभी-कभी बल पराक्रम-साहसिकता के रूप में इसकी स्थूल अभिव्यक्ति देखी जा सकती है।

मन को लुभाने वाले, समुदाय को आकर्षित करने वाले सौंदर्य में जो तेजस्विता एवं सौम्यता बिखरी होती है, वह और कुछ नहीं, प्राणों का उभार है। वृक्ष-वनस्पति पुष्पों से लेकर, पहाड़, नदी-सरोवर, शिशु-शावक, किशोर-किशोरियों में जो कुछ भी आह्लादकारी सौंदर्य दिखाई पड़ता है, वह सब प्राण का ही प्रताप है। अभिव्यक्ति के रूप भिन्न-भिन्न घटकों में भिन्न हो सकते हैं, पर मूल प्राण तत्त्व एक ही होता है, एक ही स्रोत इस समष्टिगत प्राण का है।

मानवी काया का जो स्थूल बहिरंग है, उसका सूक्ष्म शरीर जिन प्राण स्फुल्लिगों के समुच्चय से बना है, वह अपने आप में अनंत अपरिमित शक्तियों का पुँज है। यही कारण है कि इस शरीर को देव मंदिर कहा गया है, जिसमें पाँच प्राण रूपी पंच देव प्रतिष्ठापित हैं। जब एक देवता की सहायता ही मनुष्य को अजर-अमर बना देती है तो इन पंच देवों की सिद्धि कर लेने वाला कितना समर्थ, सशक्त हो सकता है, उसकी कल्पना भर से रोमांच हो उठता है।

जिनके प्राण समर्थ हैं वे एक ही शरीर में कई स्थानों पर कार्य करते रह सकते हैं। ऐसी अनेक घटनाएँ प्राणवान संकल्पवान व्यक्तियों के साथ घटती देखी गई हैं।

जापान के डा० शेरावुड ने प्राणयोग प्रक्रिया का अध्ययन कर महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले व अपने शोध ग्रंथ में प्रकाशित किए हैं। श्रीमती जे० सी० ट्रस्ट ("अणु और आत्मा" पुस्तक की लेखिका) की ही तरह उन्होंने भी प्राण सत्ता के अद्‌भुत प्रयोग किए व सम्मानित नागरिकों, षत्रकारों के समक्ष प्रस्तुत किए थे। एक ब्लैक बोर्ड पर खड़िया बाँधकर अपनी प्राण सत्ता सूक्ष्म शरीर के रूप में स्थूलकाया से बाहर निकालकर अनेक प्रश्न ब्लैक बोर्ड पर हल किए। पत्रकार गुत्थियाँ देते रहे एवं खड़िया ब्लैक बोर्ड पर चलती रही। ओ० बी० ई० (आउट ऑफ बॉडी एक्सपीरिऐंस) की इस प्रक्रिया द्वारा उन्होंने यह प्रमाणित किया कि मानव शरीर मात्र वहीं तक सीमित नहीं है, जो दृश्यमान है। सूक्ष्म की सत्ता, प्राण शक्ति की क्षमता असीम अपरिमित है। इस प्रकार के कई उदाहरण ग्रंथों में मिलते हैं। यहाँ चर्चा ओ० बी० ई० की नहीं, इच्छा शक्ति के चमत्कारी स्वरूप एवं उसके सुनियोजन की चल रही है। इस प्रसंग में

उपरोक्त घटना को देखा जाए तो वह रहस्य रोमांचकारी घटना कम एवं मानवी प्राणशक्ति की अपरिमित सामर्थ्य की परिचायक अधिक कही जाएगी।

शरीर के नियम बंधनों से मुक्त मानवी चेतना को प्रमाणित करने के लिए डा० थेल्मामॉस ने ऐसी कई घटनाओं का उल्लेख किया है, उनमें से एक घटना सन् १९०८ की है। ब्रिटेन के 'हाउस ऑफ लार्डस' का अधिवेशन चल रहा था। इस अधिवेशन में विरोधी दल ने सरकार के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव रखा था और उस दिन प्रस्ताव पर मत संग्रह किया जाना था। विरोधी पक्ष तगड़ा था। अतः सरकार को बचाने के लिए सत्तारूढ़ दल के सभी सदस्यों का सदन में उपस्थित होना आवश्यक था। इधर सत्तारूढ़ दल के एक प्रतिष्ठित सदस्य सर कॉर्नरोश गंभीर रूप से बीमार पड़े हुए थे। उनकी स्थिति इस लायक भी नहीं थी कि वे शैय्या से उठकर चल-फिर भी सकें। जबकि उनकी हार्दिक आकांक्षा यह थी कि वे भी मतदान में भाग लें। उन्होंने डाक्टरों से बहुत कहा कि उन्हें किसी प्रकार मतदान के लिए सदन में ले जाया जाए परंतु डाक्टर अपने कर्त्तव्य से विवश थे। आखिर उनका जाना संभव न हो सका। परंतु मतदान के समय सदन में कई सदस्यों ने देखा कि सर कॉर्नरोश अपने स्थान पर बैठे मतदान में भाग ले रहे हैं, जबकि डाक्टरों का कहना था कि वे अपने बिस्तर से हिले तक नहीं। प्रबल प्रचंड शक्ति ही चेतन-सत्ता को वहाँ खींच लाई थी।

एक दूसरी घटना का उल्लेख करते हुए डा० मॉस ने लिखा है—"ब्रिटिश कोलंबिया विधान सभा का अधिवेशन विक्टोरिया सीनेट में चल रहा था। उस समय एक विधायक चार्ल्सवुड बहुत बीमार थे, डॉक्टरों को उनके बचने की उम्मीद नहीं थी, परंतु उनकी उत्कट इच्छा थी कि वे अधिवेशन में भाग लें। डॉक्टरों ने उन्हें बिस्तर से उठने के लिए भी मना कर दिया था और वे अपनी स्थिति से विवश बिस्तर पर लेटे थे। परंतु सदन में सदस्यों ने देखा कि श्री चार्ल्स विधान सभा में उपस्थित हैं। अधिवेशन की समाप्ति पर सदस्यों का जो फोटो लिया गया, उसमें चार्ल्सवुड भी विधान सभा की कार्यवाही में भाग लेने वाले सदस्यों के साथ उपस्थित थे। यह चित्र आज भी वहाँ के म्यूजियम में सुरक्षित है।

❑ ❑

क्यों धधक उठते हैं अग्नि के ये शोले

स्वतः किसी शरीर में से प्राणाग्नि प्रकट होने की घटनाओं का विवरण सत्रहवीं सदी के बाद में खोजा और पंजीकृत किया गया है। उनमें से कितनी ही घटनाएँ प्रकाशित पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं में छपती रहती हैं। जहाँ इस प्रकार की जाँच-पड़ताल की व्यवस्था नहीं है वहाँ भी कुछ ऐसा ही होता रहता होगा, पर उसका प्रामाणिक उल्लेख न होने से ऐसी चर्चा का विषय नहीं बनाया जा सकता जिसके सहारे किसी तथ्य तक पहुँचने का प्रयास किया जा सकें।

प्रामाणिक घटनाओं में से कुछ उल्लेख उपलब्ध हैं—

फ्रान्सिस हिचिंग की पुस्तक 'दि वर्ल्ड एटलस ऑफ मिस्ट्रीज' में सन् १६३८ की एक अमेरिकी घटना का उल्लेख है कि गर्मी के मौसम में एक दिन नारफॉक ब्राड्स नामक स्थान पर नौका विहार कर रही एक महिला के शरीर से अग्नि की लपटें स्वतः फूट पड़ीं। साथ में उसके पति और बच्चे भी थे। पानी से आग बुझाने का प्रयास किया गया। पर उस भभकती अग्नि पर काबू नहीं पाया जा सका। वह मेरी कारपेंटर नामक उस महिला के शरीर को भस्मीभूत करके अपने आप बुझ गई।

ओहियो की एक फैक्ट्री में आठ बार आग लग चुकी थी। इसके कारण को पता करने के लिए वैज्ञानिक जासूस रोबिन बीच को आमंत्रित किया गया। रोबिन बीच ने सभी कर्मचारियों को एक-एक करके इलैक्ट्रोड और वोल्ट मीटर से जुड़ी एक धातु पट्टिका पर चलाया। फैक्ट्री की एक महिला कर्मचारी ने जैसे ही धातु पट्टिका पर पाँव रखा, वोल्ट मीटर की संकेतक सुई उच्च बिन्दु पर जा टिकी, जबकि अन्य कर्मचारियों के समय वह औसत बिंदुओं के बीच डोलती रही थी। फैक्ट्री मे आग लगने का कारण वह महिला ही थी जिसके भीतर विद्युत-शक्ति अत्यधिक मात्रा में विद्यमान थी। उस महिला को दूसरे विभाग में भेजा गया, तब से आग लगने का सिलसिला समाप्त हो गया।

कुछ वर्षों पूर्व लंदन में एक डिस्कोथिक में नाच रहे एक प्रेमी युगल का सारा आनंद महाशोक में बदल गया जब उस लड़के के

साथ थिरक रही सुनहरे बालों वाली युवती सहसा चीख पड़ी। लड़की के सुनहरे केश आग की लपटों में लहरा रहे थे। लड़के ने आग बुझाने की कोशिश की तो उसके हाथ जल गए। कुछ क्षणों के बाद वह उन्नीस वर्ष की युवती राख की ढेरी में बदल गई। यह प्राण विद्युत के विस्फोट का ही परिणाम था। इसके पहले चेम्सफोर्ड में ऐसी ही एक घटना २० सितंबर १९३८ को घटित हुई थी और एक महिला देखते-देखते अनेक व्यक्तियों के सामने नीली लपटों में खो गयी थी।

व्हिटले (इंग्लैंड) का एक नागरिक जॉनहार्ट ३१ मार्च १९०८ को अपने घर में बहन के साथ बैठा था। सहसा उनकी बहन के शरीर से आग की लपटें निकलने लगीं। जॉनहार्ट ने उसे कंबल से लपेट दिया, पर कंबल, कुर्सी समेत वह आग में स्वाहा हो गई।

'स्पांटेनियस ह्यूमन कम्वशन' की इन घटनाओं की शृंखला में बिहार के भागलपुर जिले की पाँच वर्ष पूर्व १९८२ के सूर्य ग्रहण के अवसर पर घटी एक घटना का उल्लेख यहाँ करना समीचीन होगा। एक युवक अपने घर के आँगन में मौन बैठा था। बारंबार घर वालों के पूछने पर उसने बताया कि आज उसके जीवन का अंतिम दिन है घर के सदस्यों ने उसके कथन की ओर ध्यान नहीं दिया। थोड़ी देर तक वह सूर्य की ओर मुँह किए ताकता रहा। अचानक उसके शरीर से अग्नि की नीली ज्वालाएँ फूटने लगीं। घर के सदस्यों ने शरीर पर पानी फेंका तथा कंबल से ढँक दिया पर शरीर उस तीव्र ज्वाला में बुरी तरह झुलस गया। आग तो बुझ गई पर उसे बचाया न जा सका। अस्पताल पहुँचने पर उसने दम तोड़ दिया।

वैज्ञानिकों का ऐसा मत है कि पच्चीस वोल्ट से ६० वोल्ट तक का विद्युत बल्ब जला सकने योग्य बिजली की मात्रा प्रत्येक शरीर में न्यूनाधिक अनुपात में क्षेत्र में पाई जाती है। हाथों, आँखों और हृदय में इसकी सक्रियता कुछ अधिक सघन होती है। ट्रांजिस्टर के एंटीना को हाथ की उँगलियाँ छूकर बजाएँ तो आवाज तेज हो उठती है। उँगलियाँ हटाने पर आवाज पहले जैसी हो जाती है। आँखों की विद्युत-शक्ति को त्राटक साधना में घनीभूत कर उपयोगी बनाया जाता है। हिप्नोटिज्म में इसी विद्युत शक्ति को प्रखर और वशीभूत बनाने की साधना की जाती है।

सत्रहवीं सदी का एक प्रसंग है। ससेक्स की एक वृद्धा की प्राण विद्युत सहसा धधक उठी और वह अपनी झोंपड़ी में झुलसकर जल मरी। 'डेली टेलिग्राफ' लंदन ने एक बार एक ट्रक ड्राइवर के ट्रक के भीतर ही अपनी सीट पर जल जाने की खबर छापी थी। इसी प्रकार 'रेनाल्ड न्यूज' ने पश्चिमी लंदन की एक खबर छापी थी कि एक व्यक्ति वहाँ सड़क से जा रहा था तभी सहसा उसके भीतर से लपट निकली और वह वहीं झुलसकर सिमट गया।

काउडर स्पोर्ट पेंसिलवानिया में डान० ई० गास्नेल मीटर रीडिंग का काम करता था। इसी क्षेत्र में एक वृद्ध फिजिशियन डॉ० जॉन इर्विन वेंटले रहते थे। वृद्ध होते हुए भी वे पूर्णतया स्वस्थ थे। ५ दिसंबर १९६६ को नित्य की तरह डान गास्नेल मीटर रीडिंग के लिए निकला। डॉ० जॉन इर्विन वेंटले के दरवाजे पर उसने दस्तक दी। प्रत्युत्तर न मिलने पर उसने आवाज लगाई। फिर भी कोई उत्तर नहीं मिला। वह मकान के ही एक पाइप के सहारे ऊपर के कमरे में पहुँचा। कारण यह था कि ऊपर कमरे की ओर से एक विचित्र प्रकार की जलने की गंध आ रही थी। कमरे में पहुँचकर देखा तो वहाँ से हल्का नीला धुआँ उठ रहा था। कमरे की सतह पर राख की ढेर पड़ी हुई थी। अंदर कमरे का दृश्य अत्यंत वीभत्स था। डॉ० वेंटले का दाहिना पैर जूते सहित मात्र अधजली स्थिति में पड़ा था। अवशेष शरीर के सभी अंग जलकर राख हो गए थे। विशेषज्ञों ने भली-भाँति घटना का अध्ययन किया और अंततः स्वतः जलने की संज्ञा दी। ऐसा कोई सुराग नहीं मिला जो किसी अन्य प्रकार से आग लगने की पुष्टि कर सके। सबसे आश्चर्य की बात यह थी कि कमरे से निकलने वाली दुर्गंध माँस के जलने जैसी न होकर मीठी महक से युक्त थी।

इसी तरह की एक घटना जुलाई १९५१ के एक दिन प्रातः सेंट पीटर्स बर्ग फ्लोरिडा में घटी। मेरीरिजर नामक एक अत्यंत हृष्ट-पुष्ट महिला कुर्सी पर ही बैठे-बैठे जल गई। इस कायिक दहन की विशेषता यह थी कि भयंकर अग्नि शरीर से निकली, उसे जलाती रही पर मात्र एक मीटर के घेरे तक ही सीमित रही। मेरी का ८० किलो वजनी शरीर पूर्णतया भस्मीभूत होकर चार किलो राख में

परिवर्तित हो गया। वेंटले की भाँति उसका भी एक पैर अधजला उस घेरे में बच गया था। खोपड़ी सिकुड़कर संतरे के आकार में बदल गई थी।

अवशेषों की जाँच के लिए पेंसिलवानिया स्कूल ऑफ मेडिसिन के फिजिकल एंथ्रोपोलॉजी के प्रोफेसर डॉ० विल्टन क्रोगमैन के पास भेजा गया तो खोपड़ी की आकृति देखकर वे आश्चर्यचकित रह गए। वह एक ख्याति प्राप्त फरेंसिक वैज्ञानिक थे तथा वर्षों का अनुभव था। जब तक कि घटनाओं में ऐसी कोई घटना उनके पास नहीं आई थी कि जलने के उपरांत खोपड़ी सिकुड़कर छोटी हो गई हो क्योंकि विज्ञान के नियमानुसार जलने के बाद खोपड़ी को या तो फूल जाना चाहिए अथवा टुकड़े-टुकड़े हो जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि इस विचित्र अग्निकांड में खोपड़ी का सिकुड़कर छोटा हो जाना निःसंदेह एक आश्चर्यजनक बात है। अपने अनुभव के आधार पर उन्होंने यह बताया कि बारह घंटे तक लगातार तीन हजार डिग्री फारेनहाइट तापक्रम पर रहने पर भी शरीर की संपूर्ण हड्डियाँ जलकर भ्स्मसात् हो गई हों ऐसा अब तक देखा-सुना नहीं गया था। पर यह घटना अपने में सबसे विलक्षण है जिसकी यथार्थता पर बिल्कुल ही संदेह करने की गुंजाइश नहीं है।

पेरिस की १९५१ में घटी एक घटना और भी अधिक आश्चर्यजनक है। "ग्रेट मिस्ट्रीज" पुस्तक के लेखक हैं इलेनार वान जांड्ट तथा राय स्टेमन। पुस्तक में वर्णित घटना के अनुसार एक व्यक्ति ने अपने एक मित्र से शर्त लगाई कि वह जलती मोमबत्ती को निगल सकता है। सत्यता को परखने के लिए दूसरे मित्र ने उसकी ओर तुरंत एक जलती मोमबत्ती बढ़ा दी। जैसे ही उस व्यक्ति ने निगलने के लिए मोमबत्ती को अपने मुँह की ओर बढ़ाया वह जोर से ही चिल्लाया। मोमबत्ती की लौ से उसके होठों पर नीली लौ दीखने लगी। आधे घंटे के भीतर ही पूरे शरीर में आग फैल गई और कुछ ही समय में उसके शरीर के अंगों, माँसपेशियों, त्वचा एवं हड्डियों को जलाकर राख कर दिया।

अग्नि के भौतिक जगत में अगणित प्रयोग हैं। प्राणाग्नि का स्तर उसमें कुछ ऊँचा ही है नीचा नहीं। यदि उसका स्वरूप और

प्रयोग जाना जा सकता है तो हानियों से बचना और लाभों को उठाना ये दोनों ही प्रयोजन भली प्रकार पूर्ण हो सकते हैं।

सन् १८४७ में फ्रांस में एक ७१ वर्षीय बूढ़े की मृत्यु स्वतः प्रवर्तित अग्नि में जल जाने के कारण हुई। कोर्ट ने इसे हत्या का मामला मानकर मृतक के पुत्र और जमाई को गिरफ्तार कर लिया। दोनों पर वृद्ध को मार डालने और जला देने का संगीन अपराध थोपा गया।

लड़के और जमाई का कहना था कि उसके पिता रात्रि के समय अपने बिस्तर पर सो रहे थे। अचानक उनका शरीर अग्नि की सफेद लपटों से घिर गया और चंद मिनटों में ही राख की ढेर में परिणित हो गया। हाथ और पैरों के निचले हिस्से को छोड़कर शेष कुछ नहीं बचा। अवशिष्ट राख भी बहुत थोड़ी थी। संपूर्ण कमरा गहरे धुएँ से भर गया था।

लड़कों के इस कथन की पुष्टि के लिए कोर्ट ने डा० मैसन के एक दलीय आयोग को नियुक्त किया। डा० मैसन ने छान-बीन करने पर पाया कि लड़के और जमाई का कथन सत्य है। कोर्ट ने स्वतः प्रवर्तित अग्निकांड का मामला मानकर दोनों अभियुक्तों को बरी कर दिया।

१६ फरवरी १८८८ को रविवार के दिन कोलचेस्टर, इंग्लैंड में एक बूढ़ा सिपही शराब पीकर सूखी घास के गट्ठरों पर सोने के लिए चढ़ गया। लेटते ही उसके शरीर के चारों तरफ उठती ज्वाला की लपटों ने शरीर को भस्मीभूत बना दिया। आश्चर्य यह था कि सूखी घास का एक तिनका भी नहीं जला।

इंग्लैंड में साउथम्पटन शहर के पास बुटलाक्स हीथ गाँव में श्रीमान जान किले नामक दंपत्ति निवास कर रहे थे। २६ फरवरी १६०५ को सुबह जॉन के मकान से खड़खड़ाहट की आवाज सुनकर पड़ौसियों ने उनके मकान के अंदर प्रविष्ट किया। अंदर आग की लपटें फैली हुई थीं। मि० किले फर्श पर पड़े राख के ढेर में परिणत हो गए थे। श्रीमती किले उसी कमरे में कुर्सी पर बैठी बुरी तरह जलकर कोयले में बदल गई थीं। परंतु जिस कुर्सी पर श्रीमती किले बैठी थी उस पर आँच तक नहीं लगी थी। थोड़ी दूर फर्श पर तेल

का लैंप लुढ़का पड़ा था जिसे देखकर पुलिस को आग लगने के कारणों का पता लगाने के लिए कहा गया। लैंप से आग लगाने का अर्थ था कमरे के फर्नीचर, कपड़े आदि सभी जल जाने चाहिए थे, किंतु ऐसा नहीं हुआ था। अतः दंपत्ति को "एक्सीडेंटल डेथ" का प्रकरण मानकर जाँच-पड़ताल को वहीं समाप्त कर दिया गया।

सन् १६३२ में जनवरी के ठंडक के दिनों में नार्थ कैरोलिना के ब्लैडेनबोरो शहर में निवास करने वाली महिला श्रीमती चार्ल्स विलियम्सन के रुई के कपड़े में अचानक आग धधकने लगी। उनके आसपास कहीं कोई आग नहीं थी और न ही उनका ड्रेस किसी ज्वलनशील पदार्थ के संपर्क में ही था। उनके पति और लड़की ने जलते हुए कपड़ों को उतारकर उनकी प्राण रक्षा की। इस तरह घटना उनके साथ तीन बार घट चुकी थी। इसके बाद श्रीमान् विलियम्सन का एक जोड़ी पेंट एक आलमारी में टँगा था उसमें भी आग लग गई और जलकर भस्म हो गया। इसके बाद बिस्तर और पर्दे में आग लग गई। कमरे के बहुत-से सामान नीली लौ में जलते देखे गये परंतु उनके समीप पड़े किसी अन्य वस्तु को आग की लपटों ने छुआ तक नहीं। इस ज्वाला में न तो काई गंध थी और न ही किसी प्रकार का धुआँ था। जिस वस्तु को आग लगी वह पूर्णतया भस्मीभूत हो गई।

विभिन्न हस्तियाँ—आर्सेन एक्सपर्ट, पुलिस दस्ते, गैस और विद्युत कंपनी के विशेषज्ञ सभी बुलाए गए। परंतु आग लगने का कारण रहस्यमय ही बना रहा। चार दिनों तक यह अग्निकांड चलता रहा और पाँचवें दिन अचानक अपने आप समाप्त हो गया। अदृश्य हाथों द्वारा संचालित इस अग्निकांड का उत्तर किसी के पास नहीं था।

सन् १६०७ में भारतवर्ष के दीनापुर, जिले के मनेर गाँव से एक जली हुई महिला का शव ले जाते हुए दो व्यक्तियों को दो पुलिस वालों ने पकड़ लिया। महिला का शव जिला मजिस्ट्रेट के सामने प्रस्तुत किया गया। कपड़े के अंदर शरीर से तब भी लपटें निकल रही थीं। महिला के कमरे का निरीक्षण किया गया। वहाँ बाहरी आग लगने के कोई चिन्ह नहीं मिले।

ये घटनाएँ बताती हैं कि मानवी सत्ता मात्र रासायनिक पदार्थों की बनी नहीं है, उसमें प्राण ऊर्जा की प्रचंडता भी विद्यमान है। यह विद्युत भंडार सामान्यतया शरीर निर्वाह भर के काम आता है। इसका बहुत बड़ा अंश प्रसुप्त स्थिति में निरर्थक पड़ा रहता है। प्राणाग्नि के ऐसे असंख्य उपयोग हो सकते हैं, जिनके सहारे मुनष्य अब की अपेक्षा कहीं अधिक समर्थ वरिष्ठ सिद्ध हो सके।

घटना २ जुलाई १९५१ की है। अमेरीका के सेंट पीटर्स बर्ग (फ्लोरिडा) के एक मुहल्ले मेरी स्ट्रीट में रहने वाली श्रीमती मेरी हार्डी रोजर अपने मकान में विचित्र ढंग से जली हुई मरी पाई गई। २ जुलाई की पूर्व संध्या को हार्डी रोजर ने अपने मित्रों को एक पार्टी दी थी और उसका घर आधी रात तक चहल-पहल से भरा था। मित्रों के ठहाके गूँज रहे थे। देर रात गए पार्टी समाप्त हुई और हार्डी रोजर अपने मित्रों को विदा कर हलके चित्त से आकर अपने बिस्तर पर लेट गई। सुबह देर तक उसके मकान का दरवाजा बंद रहा। मकान मालकिन पी० कार्पेंटर ने सोचा कि रात में देर तक जागने के कारण रोजर अभी तक सो रही है। उसके काम पर जाने का समय हो गया है, इसलिए उसे जगा देना चाहिए।

यह सोचकर श्रीमती कार्पेंटर ने रोजर के घर का दरवाजा खटखटाया किंतु अंदर से कोई उत्तर नहीं मिला। दो-तीन बार दरवाजा खटखटाने के बाद जब कोई उत्तर नहीं मिला तो श्रीमती कार्पेंटर ने सोचा कि रोजर को ज्यादा ही गहरी नींद आ गई होगी इसलिए स्वयं ही दरवाजा खोलकर उसे जगा देना चाहिए। यह सोचकर दरवाजा खोलने के लिए मकान मालकिन ने पीतल की बनी हुई कुंडी पर जैसे ही हाथ रखा उसके मुँह से चीख निकल गई। पीतल की कुंडी इतनी गरम हो गई थी जैसे उसे घंटों आग से तपाया गया हो। उसी से मिसेज कार्पेंटर का हाथ जल गया था।

उसकी चीख सुनकर पास ही रहने वाले दोनों पड़ौसी निकल आए। मिसेज कार्पेंटर ने उन्हें सारी बात बताई और कहा कि शायद फ्लैट में कोई दुर्घटना घट गई है। दुर्घटना की संभावना का अनुमान लगाकर दोनों पड़ौसियों ने दरवाजे को कंधे से धक्का देना शुरू

किया। दो चार धक्कों में ही कुंडी निकलकर अलग हो गई और तीन व्यक्ति अंदर प्रविष्ट हुए।

फ्लैट के भीतर कमरे की दोनों खिड़कियाँ खुली हुई थीं और कमरे की छत तथा दीवारें कालिख से इस तरह पुती हुई थी जैसे किसी ने वहाँ आग लगाई हो। कमरे का तापक्रम भी असाधारण रूप से गरम था और वहाँ रखा हुआ आदमकद शीशा इतनी अधिक आँच के कारण टूटकर पिघल गया था एवं बुरी तरह टुकड़े-टुकड़े हो गया था किंतु आश्चर्य की बात यह थी कि कमरे में धुएँ या जलने की गंध का कहीं नामो-निशान तक नहीं था।

उन लोगों ने मेरी हार्डी को आवाज दी। पर कोई उत्तर नहीं मिला। मेरी हार्डी वहाँ हों तो उत्तर भी दें, उसके अवशेष तो राख की एक ढेरी के रूप में कमरे की ही एक खिड़की के पास पड़े थे। मिसेज कार्पेंटर और दोनों पड़ौसियों ने उन अवशेषों को देखा तो दंग रह गए और तत्काल इस घटना की सूचना पुलिस को दी। पुलिस आई, उसने जाँच की परंतु रहस्य सुलझने का कोई सूत्र हाथ में नहीं आ रहा था। पहले तो जाँच अधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मामला असाधारण रूप से की गई आत्म-हत्या का है परन्तु शीघ्र ही उन्हें अपना विचार बदलना पड़ा, क्योंकि आत्महत्या के लिए अपने शरीर को किसी भी प्रकार आग लगाई जाए किंतु वह उस ढंग से राख में परिवर्तित नहीं हो सकता, जिस प्रकार मिसेज हार्डी का शरीर राख में परिणत हो गया था। आग लगने के बाद आखिर कोई भी व्यक्ति छटपटाता तो है ही और उस छटपटाहट के कारण मरणांतक स्थिति में पहुँचने तक भी आग निश्चित रूप से बुझ सकती है। फिर मानवी काया एवं उस पर भी अस्थियों को भस्मीभूत करने के लिए जितना ऊँचा भट्टी के स्तर का तापमान चाहिए, इतना तापमान आग के किसी प्रचंड भयंकर स्रोत से ही उत्पन्न हो सकता था। वहाँ पर कमरे की जो स्थिति थी और कमरे के सामान को जो क्षति पहुँची थी, उसके आधार पर किसी भी प्रकार यह नहीं कहा जा सकता कि कमरे में इतना उच्च तापमान पैदा हुआ हो।

जाँच अधिकारियों को जिस बात ने सबसे अधिक उलझन में डाला वह यह थी कि मेरी हार्डी की देह जिस स्थान पर राख हुई

पड़ी थी, वहाँ फर्श पर बिछे कालीन पर आग लगने के बहुत ही सामान्य निशान थे। उसके पास ही रखी मेज पर पड़े हुए अखबार और कपड़ों को तो आग ने छुआ तक नहीं था। जाँच अधिकारी एडवर्ड डेविस इन विचित्र विरोधाभासों के कारण जब किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सके तो उन्होंने प्रसिद्ध शरीर विज्ञानी डा० विंस्टन क्रागमैन की सहायता ली।

डा० विंस्टन क्रागमैन इस दुर्घटना के विभिन्न कारणों की संभावना पर विचार करते हुए इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मिसेज हार्डी रोजर उस रहस्यमयी आग की शिकार हुई हैं, जिसे विज्ञान भाषा में "स्पांटेनियस ह्यूमन कम्बशन" (स्वतः दहन) कहते हैं। स्पांटेनियस ह्यूमन कम्बशन अथवा अनायास अपने आप जलने की यह प्रक्रिया ऐसी है जो पिछले दसियों वर्षों से वैज्ञानिकों को उलझन में डाले हुए हैं। इस रहस्यमयी आग की उत्पत्ति के कारणों को जानने के लिए विभिन्न प्रयोगों और अब तक इस तरह की घटी सैकड़ों घटनाओं में से करीब १०० घटनाओं का अध्ययन करने के बाद भी वैज्ञानिक यह पता नहीं लगा पाए हैं कि यह रहस्यमयी आग किस प्रकार किन कारणों से उत्पन्न होती है ? इसका स्रोत क्या है ?

अपने आप शरीर में आग उत्पन्न होना और उस आग में जलकर शरीर का भस्मीभूत हो जाना ऐसा विचित्र रहस्य है कि सामान्य अग्निकांडों से उसकी तुलना नहीं की जा सकती, क्योंकि जिस किसी के भी साथ इस प्रकार की घटना घटती है पहले तो उसे इसका कोई लक्षण ही पता नहीं चलता। अचानक हार्ट अटैक की तरह बिना किसी पूर्व सूचना के अग्नि विस्फोट होता है और जो व्यक्ति इस रहस्यमयी अग्नि का शिकार होता है, उसे संभवतः इसकी कोई यंत्रणा भी अनुभव नहीं होती।

उपरोक्त घटना के पहले और बाद में भी इस तरह के ढेरों अग्निकांड हुए हैं, इनमें ७ दिसंबर १९५६ को होनोलूलू द्वीप में ऐसा ही अग्निकांड घटित हुआ। उस द्वीप की एक साधारण-सी बस्ती में रहने वाली पचहत्तर वर्षीय महिला यग सिककिम इस घटना की प्रत्यक्ष साक्षी रहीं। उस दिन दोपहर को वृद्धा किम किसी घरेलू काम में व्यस्त थी अचानक उसे किसी काम से अपनी पड़ौसिन वर्जीनिया कॉगेट की याद आई। किम दयालु, व्यवहारकुशल और पर

दु:खकातर महिला थी। उसके स्वभाव से सभी खुश रहते थे और कॉगेट तो उसकी विशेष रूप से आभारी थी, क्योंकि वक्त-बेवक्त उसे किम से सहायता मिल जाया करती थी इसलिए वह किम के कई छोटे-बड़े काम कर दिया करती थी।

किम को किसी काम के सिलसिले में कॉगेट की याद आई तो उसके घर पहुँची। वहाँ पहुँचकर उसने जो कुछ देखा उससे किम की भय के मारे चीख निकल गयी। किम ने देखा कि कॉगेट का शरीर नीली लपटें छोड़ता हुआ जल रहा है। उसकी चीख सुनकर आस-पास रहने वाले लोग दौड़े आए। उन्होंने भी वह दृश्य देखा। वे कॉगेट को बचाने का कोई उपाय करने की बात सोच ही रहे थे कि देखते ही देखते उसका शरीर मुट्ठी भर राख में बदल गया। आश्चर्य की बात यह थी कि कॉगेट न तो अचेत हुई थीं और न ही चीखी-चिल्लाई ही थीं।

सैन फ्रांसिस्को के लागूना होम में भी ३१ जनवरी १९५९ को ऐसी ही घटना घटी जिसका प्रत्यक्षदर्शी वहाँ का एक चपरासी था। लागूना होम में बूढ़े व्यक्तियों की देखभाल की जाती थी। सरकार की ओर से चलाया जाने वाला वह एक ऐसा संस्थान है, जहाँ वृद्ध व्यक्ति ही रहते थे। उस घटना का प्रत्यक्षदर्शी चपरासी सिलेवेस्टर एलिस ३१ जनवरी की शाम को चार बजे के लगभग जैक लार्बर को दूध का गिलास देने गया था, जो वृद्ध व्यक्तियों को होम की ओर से वितरित किया जाता था। जैक लार्वर ने दूध का गिलास ले लिया और पीने लगा। इसके बाद ऐलिस रसोई में चला आया।

कोई पंद्रह मिनट के बाद एलिस लार्वर के कमरे में दूध का खाली गिलास वापस लेने के लिए पहुँचा। जब वह लार्वर के कमरे में पहुँचा तो वहाँ उसने जो कुछ देखा वह बेहद भयावह दृश्य था। उसने देखा कि जैक लार्वर नीले रंग की लपटों में बुरी तरह जल रहा है। यह दृश्य देखकर उसने एक कंबल लार्वर के शरीर पर लपेट देना चाहा परंतु जैसे ही कमरे के कोने में रखा कंबल लेकर उसके पास दौड़ता हुआ-सा जाने लगा, एलिस को कुछ फीट की दूरी पर आग की तेज असह्य आँच अनुभव हुई। उसे लगा कि वह भी उस आँच में झुलसने लगा है।

अपने को बचाते हुए एलिस ने कंबल लार्वर पर फेंका और दौड़कर कमरे के बाहर आया तथा मदद के लिए चीखने-पुकारने लगा। लोग मदद के लिए दौड़े आए। इसमें मुश्किल से पाँच-सात मिनट लगे होंगे। सहायता के लिए आए संस्था के कर्मचारी तथा अन्य व्यक्ति लार्वर के कमरे में पहुँचे तो उन्होंने देखा कि वहाँ राख का एक ढेर मात्र पड़ा है और कमरे के भीतर झुलसा देने वाली गर्मी व्याप रही है। आश्चर्य की बात तो यह थी कि एलिस ने जो कंबल लार्वर के ऊपर फेंका था, उस पर कहीं-कहीं ही आग ने अपना प्रभाव दिखाया था। कमरे की सभी वस्तुएँ यथावत् सुरक्षित थीं। वहाँ न तो किसी प्रकार का धुआँ फैला हुआ था और न ही कोई चीज जलने की गंध आ रही थी।

इस घटना की रिपोर्ट पुलिस में की गई। जाँच अधिकारियों ने पहले तो उसे आत्म-हत्या का असाधारण प्रयास माना परंतु इस विचार की कहीं से भी पुष्टि नहीं होती थी। कमरे में ऐसी कोई वस्तु नहीं पाई गई जो ज्वलनशील हो फिर यदि लार्वर ने आत्मदाह ही किया था तो उस आग से आस-पास की वस्तुएँ कैसे अप्रभावित रह गई थीं ? यहाँ तक कि उसके ऊपर जो कंबल फेंका गया था, वही बिना जले कैसे बच गया था ? अंत में जाँच अधिकारियों को अपना निष्कर्ष बदलना पड़ा और इस केस को फाइल कर दिया गया।

इस तरह की जितनी भी घटनाएँ अब तक प्रकाश में आई हैं और जिनका विश्लेषण किया गया है, उनमें यह तथ्य आश्चर्यजनक रूप से सामने आया है कि यह आग केवल शरीर को ही जलाती है। धातुओं पर इसका कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता, अलबत्ता वह उन पर कुछ निशान जरूर छोड़ जाती है।

१३ जनवरी १९४३ को ५२ वर्षीय एलन एम० स्माल का जला हुआ शरीर डियर इस्ले, मेन स्थित उनके मकान से बरामद किया गया। शरीर के नीचे बिछा हुआ कार्पेट झुलस गया था। इसके अतिरिक्त कमरे की किसी भी वस्तु पर आग का कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

सन् १९०४ के अंत में इंग्लैंड के लिंकन शायर प्रांत में स्थित बिन ब्रूक पुरोहिताश्रम में दिसंबर महीने में एक अजीबो-गरीब घटना

घटित हुई। पुरोहिताश्रम के इस विशाल भवन में अचानक तीन बार आग लगी जिससे भवन का बहुत-सा हिस्सा जलकर नष्ट हो गया। आग लगने के कारणों का पता अज्ञात ही बना रहा। एक महीने बाद बिन ब्रूक का एक किसान अपने रसोईघर में गया, जहाँ नौकरानी लड़की झाड़ू लगा रही थी। उसकी पीठ से लंबी-लंबी लपटें निकल रही थीं। किसान ने आवाज लगाई और तुरंत ही उस लड़की पर झपट पड़ा। आग निकलने वाले स्थान पर हाथ से ढक दिया और आग बुझ गई। परंतु अब तक लड़की बुरी तरह से जल चुकी थी।

प्रोफेसर जेम्स हैमिल्टन 'टेनेसी' प्रांत के नशेवाइल विश्वविद्यालय में कार्यरत थे। ५ जनवरी १८३५ को विश्वविद्यालय से वापस घर आए जो तीन चौथाई मील की दूरी पर था। घर के बाहर दीवाल पर टँगे हुए हाइग्रोमीटर को देखा उस समय शून्य से भी ८ डिग्री तापमान कम था।

अचानक हैमिल्टन को बाएँ जंघे पर बिच्छू के डंक मारने जैसी वेदना महसूस हुई। उस स्थान पर गर्मी भी अत्यधिक लग रही थी। नजर पड़ते ही उन्होंने देखा कि उस स्थान से कई इंच लंबी चमकीली लपटें निकल रही थीं। हैमिल्टन को उपाय सूझा और उस स्थान को हाथ से ढककर ऑक्सीजन की सप्लाई को रोक दिया। थोड़ी देर बाद ज्वाला शांत हो गयी।

घर जाकर कपड़े उतारे और घाव का निरीक्षण किया। तीन चौथाई चौड़ा और तीन इंच गहरा घाव था। घाव वाले स्थान पर पैंट के जल जाने से उसमें एक छोटा-सा छिद्र हो गया था। घाव की मरहम पट्टी टेनेसी के प्रख्यात डॉ० जान ओवर्टन एम० डी० की देख-रेख में संपन्न हुआ। इस छिद्र को भरने में ३२ दिन लगे।

❒ ❒

अणु शक्ति से भी बृहत्तर प्राणाग्नि

यू० सी० एल० ए० (अमेरिका) के जॉन डेक ने ऐसे कई व्यक्तियों की जाँच की है, जो स्वत: दहन के आंशिक रूप से शिकार हुए। वे अपने शोध ग्रंथ "ए ट्रिटाइज ऑन स्पांटेनियस ह्यूमन कम्बशन" में लिखते हैं कि "यह समझ में नहीं आता कि इन आंशिक दहन वाले व्यक्तियों में ऐसा क्यों होता है कि थोड़ा-सा हिस्सा ही जलकर रह जाता है।" डा० वेंटले के प्रकरण का वे विशेष रूप से हवाला देते हैं, जिसमें उनके सहित दो और व्यक्ति कार में बैठे-बैठे जलकर भस्म हो गए। फलस्वरूप कार में भी आग लग गई। किसी की भी पास जाने की हिम्मत न पड़ी। जब पूर्णाहुति हो चुकी एवं आग के शोलों की गर्मी ठंडी पड़ी तो भी अस्थि-पिंजर, खोपड़ी, दाँत व अंदर के कई अवयव सुरक्षित बच गए थे। आग के बीच रहकर भी कुछ अंगों को न जलना आश्चर्य का विषय था।

वैज्ञानिकों का मत है कि मनुष्य शरीर में उसके भार का पैंसठ प्रतिशत (लगभग पैंतालीस लीटर) जल होता है। इसे वाष्पीभूत कर कर अवयवों को जलाने के लिए लगभग पाँच हजार डिग्री फारेनहाइट की अग्नि चाहिए। यह कहाँ से पैदा हो जाती है ? शरीर के जीवकोशों (लगभग ६० खरब) में से प्रत्येक में अग्नितत्त्व प्रोटोप्लाज्मा में सन्निहित होता है, पर वह इतना सुव्यवस्थित व सूत्रबद्ध होता है कि उसके शरीर जले, यह संभावना दूर-दूर तक नहीं सोची जा सकती। जब तक प्रोटोप्लाज्मा को विखंडन प्रक्रिया द्वारा उच्च प्लाज्मा में नहीं बदला जाता, तब तक अग्नि का स्वत: दहक उठना समझ से परे है। पर ऐसा होता है दहकने के अतिरिक्त यह जैव विद्युत शरीर के अंग विशेषों से नि:सृत होकर दूसरों को प्रभावित करती भी पाई गई है। उच्च स्तर को प्राप्त योगीजनों, महापुरुषों को चरण स्पर्श करने पर, सिर पर हाथ फेरे जाने, वात्सल्य, थपथपाने, अनुदान, शक्तिपात आदि में इसी स्तर की विद्युत प्रयुक्त होती है। किसी उच्च मनोभूमि के महायोगी के समीप बैठने से भी मन व अंत:करण में हलचल मचा देने वाली यही प्राण-विद्युत है।

यह सामान्य विद्युत से भिन्न स्तर की, उपकरणों की पकड़ से बाहर की शक्ति है एवं मूलतः अनुभूति का विषय है। मात्र भावनात्मक माध्यम से इसे संप्रेषित किया जा सकता है।

मनुष्य शरीर में स्थित प्राण-विद्युत के इन आकस्मिक विस्फोटों के कारणों का और उन्हें रोक सकने के उपायों का पता तो वैज्ञानिक ही लगा सकते हैं और वे लगा भी लेंगे। परंतु ऐसे विस्फोट तो विरल ही होते हैं। वे मानव-जाति की उतनी बड़ी समस्या नहीं है, जितनी कि भीतरी प्राणाग्नि के दुरुपयोग से उत्पन्न समस्याएँ।

शरीर, मन, बुद्धि अंतःकरण में क्रियाशील इस प्राणाग्नि के दुरुपयोग से व्यक्ति ऊपर चर्चित आकस्मिक विस्फोटों की तरह पूरे तौर पर भले ही न जले, किंतु भीतर ही भीतर वह दग्ध, क्षत-विक्षत होता रहता है। शरीर-शक्ति का दुरुपयोग, आहार-विहार के नियमों की अवज्ञा, बहुमूल्य जीवनी-शक्ति को काम-विकार की नालियों में बहाना—ये प्राणाग्नि के वे दुरुपयोग हैं, जिनसे व्यक्ति का बल छीजता और ओजस् घटता है। कटुवचन, परनिंदा, असत्य-कथन, वाग्घल वाणी द्वारा प्राणाग्नि को गलत ढंग से खर्च करने के उदाहरण हैं। जिनसे व्यक्ति स्वयं भी जलता है, दूसरों को भी जलाता है। दहकते अंगारों जैसे, तपी हुई छड़ जैसे, जलाने और दाग छोड़ने वाले शब्द बोलने वाले को भी उत्तप्त करते हैं और जिसके लिए कहे जाते हैं, उसे भी जलाते हैं। शरीर-शक्ति का अवांछित उपयोग स्वयं का बल घटाता है और पास-पड़ौस में भी विकृति-विक्षोभ बढ़ाता है।

बड़े पैमाने पर स्पष्ट दिखाई दे सकने वाली हानियाँ तो शरीर की आग से जल उठने की घटनाओं जैसी ही विरल होती हैं। भीषण दुष्परिणाम तो कभी-कभी ही सामने आते हैं। किंतु प्राणविद्युत के असंतुलन से, उसके 'लीक' करने लगने से स्वयं को तथा संपर्क क्षेत्र के लोगों को तेज झटके लगने के वैसे उदाहरण नित्य ही देखे जा सकते हैं जिनकी मन, बुद्धि, अंतःकरण में क्रियाशील प्राण-विद्युत निरंतर 'लीक' होती रहती है, ऐसे ढीले-पोले व्यक्तित्वों की समाज में कमी नहीं, भरमार ही दिखाई पड़ती है। उनके संपर्क में जो भी आता है, वह उनके कटुवचनों, कुचालों, दुर्भावनाओं और दुर्व्यवहार के रूप में 'लीक' हो रही प्राण-विद्युत के झटकों से आहत हो जाता है।

दूसरी ओर जो लोग इस प्राण-विद्युत का सदुपयोग करते हैं, वे कोलराडो के डब्ल्यू० पी० जोन्स की तरह स्वयं भी सुख-शांति पाते हैं, दूसरों को भी लाभ पहुँचाते हैं। जोंस अपनी इसी विद्युत क्षमता से धरती पर नंगे चलकर भू-गर्भ की अनेक धातुओं के भंडार की सही-सही जानकारी दे देते हैं। ऐसी क्षमताओं से संपन्न अनेक लोग आए दिन देखे जाते हैं और उनकी चारों ओर प्रसिद्धि फैलते देर नहीं लगती। उन्हें स्वयं भी इस परोपकार से प्रसन्नता होती है, दूसरों को भी वे उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण लगते हैं।

आंतरिक क्षेत्र में क्रियाशील प्राण-शक्ति के सदुपयोग से मिलने वाले लाभ तो और भी कई गुने अधिक हैं। साहस, शौर्य, बौद्धिक प्रखरता, सत्संकल्प और सक्रियता सही दिशाधारा में नियोजित किए जाने पर प्रगति, उत्कर्ष, सफलता, संतोष और शांति के शतमुखी अनुदानों की वर्षा करती हैं। शांखायन-सूत्र में कहा गया है—

"प्राणोऽस्मि प्रज्ञात्या"

अर्थात्—प्राण रूप प्रज्ञा मैं हूँ। इस प्राण-प्रज्ञा के द्वारा सत्संकल्प, सत्कर्म, सद्ज्ञान और सद्भाव के आधार पर जीवन के सदुद्देश्यों की प्राप्ति ही प्राणाग्नि का अभिवर्धन एवं सदुपयोग है।

जीवन में उत्कृष्टताओं की उपलब्धि इसी जीवंत प्राण-शक्ति द्वारा होती है। इसे ही प्रतिभा कहा जाता है। यही वह विद्युत तत्त्व है जो अपना परिचय कभी संकल्प बल के रूप में, कभी प्रचंड जिजीविषा के रूप में, कभी प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होने वाले अग्नि के दहकते शोलों के रूप में देता रहता है। इस महाशक्ति का यदि सुनियोजन सोचा जा सके एवं नष्ट होने से बचाकर प्रसुप्त पड़ी सामर्थ्य को जगाने में उसका सदुपयोग हो सके तो मनुष्य अपरिमित शक्ति का स्वामी हो सकता है। अपनी जाग्रत सामर्थ्य से वह ऋद्धि-सिद्धियों को करतलगत कर अपनी आत्मिक प्रगति का तथा समष्टि के कल्याण का पथ प्रशस्त करता रह सकता है।

❑ ❑

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा